1986
Feb

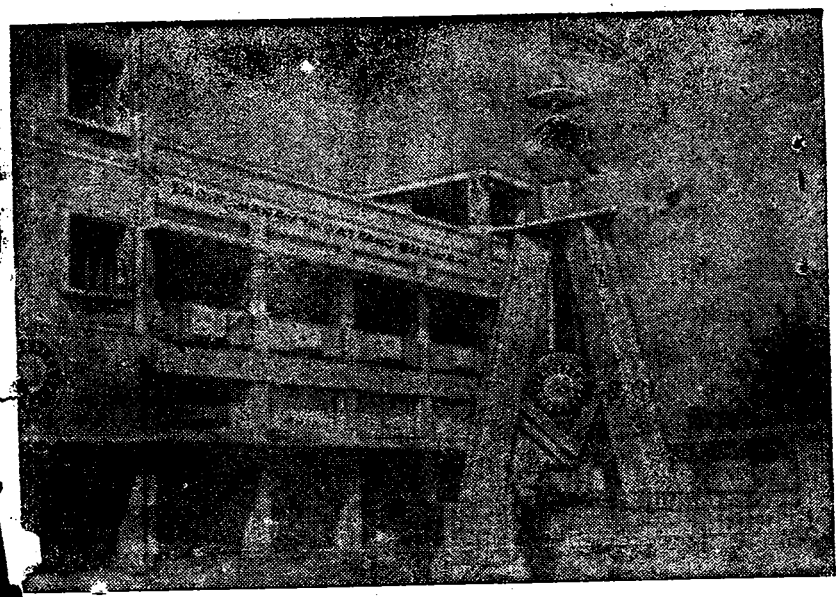

मानव मन्दिर

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट
सुतेहरी रोड, होशियारपुर
द्वारा अमूल्य भेंट
संस्थापक परम संत परम दयाल पं. फकीर चन्द जी महाराज

FORM

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Hoshiarpur.
Editor's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir or partners or shareholders, holding more than one Percent of the total capital.	Faqir Library Charitabl Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated : 10-2-86 *Signature of Publish*

Printed and Published by : Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir Hoshiarpur for the Faqir Library Charitable Trust. Hoshiarpur

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग
16-2-86 को होगा।

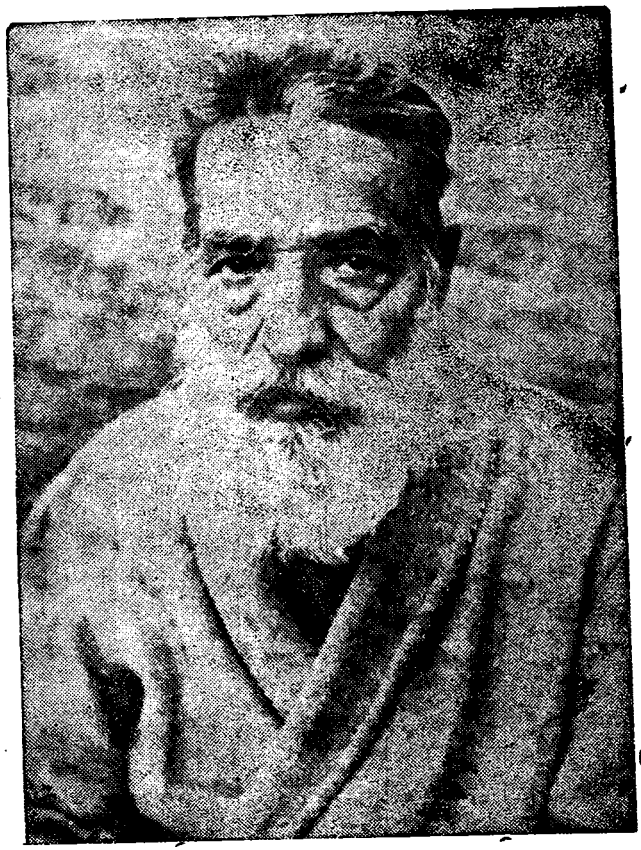

Param Sant Param Dayal Faqir Chand Ji Maharaj

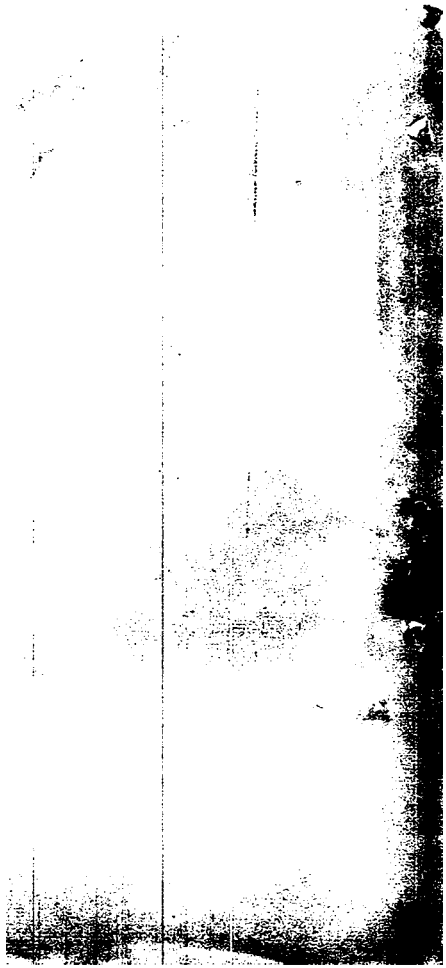

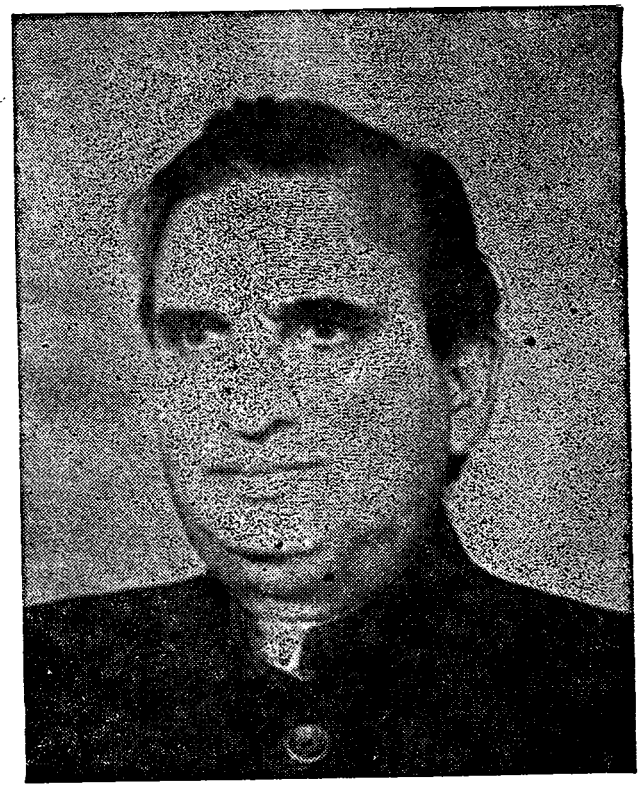

Param Sant Manav Dayal Dr. I. C. Sharma Ji Maharaj

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

सम्पादक :
डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 12	सोमवार 10 फरवरी 1986	संख्या 10

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

राधास्वामी धाम, 11—2—1931

सफलता का मार्ग

आज सखी काज करो कुछ अपना।
गुरु दरस तको छोड़ो जग सपना॥

अर्थ—ऐ मेरी आत्मा! आज तू अपना कुछ काम कर। काम यह है कि गुरु की आँख को देख और संसार के स्वप्न को छोड़ दे।

जो लोग सफलता चाहते हैं उन्हें चाहिए कि असफलता के ख़्याल से अपने आपको बचाये रखें। जिनको ज़िन्दगी या अमर पद का ख़्याल है उनके लिए ज़रूरी है कि मौत के डर को दिल से निकाल दें। जो लोग मुक्ति या आज़ादी के इच्छुक हैं उनको चाहिए कि हर प्रकार की ग़ुलामी की ज़ंजीर की कड़ियों को टुकड़े-२ कर दें तब वो सफल होंगे, अमर होंगे और मुक्त हो जायेंगे। सफलता की ये तीन सूरतें हैं और ज़रूरत इस बात की है कि यह काम अभी किया जाये देरी या सुस्ती न की जाये। और इसके लिए केवल दो बातें ज़रूरी हैं—एक तो यह कि गुरु की आँख को देखो और दूसरे यह कि इस संसार के स्वप्न का देखना बन्द

कर दो। जब संसार के स्वप्न की तरफ से आँख बन्द करोगे तब ही तुम गुरु की आँख को देख सकोगे।

लोग कहते हैं—"याद रखना मैंने फलाँ आदमी की आँखें देखी हैं" यह भारतवासियों का एक मुहावरा है। आँख देखना, आँख दिखाना कुछ माने रखता है। आँख दिखाने का मतलब है डराना और धमकाना और आँख देखने का मतलब है खबरदार होना और सम्भलना। गुरु की आँख देखने का मतलब सम्भल जाने से है।

तुम देखते हो रास्ते में एक कुत्ता पड़ा रहता है, तुम उधर से गुज़रते हो तुम्हारे पाँव की आहट सुनकर कुत्ता अपनी आँखें खोल देता है और तुम्हारी आँख को ग़ौर से देखकर अपने लिए खास किस्म का नतीजा निकालता है। अगर तुम्हारी आँखों से उसे डर पैदा होता है तो या तो दुम दबा कर भाग जाता है या तुमको देखकर भौंकने लगता है या तुमको काटने की फिक्र में लग जाता है और अगर उसे कोई डर मालूम नहीं होता तो चुपचाप आँख बन्द करके अपनी पहली हालत में चला जाता है।

दुनियादार दुनिया की तरफ से जागे हुए हैं परन्तु असलियत की तरफ से सोये हुए हैं इसलिए जिसने सच्चे मानों में गुरु की आँखें देखीं वह संसार की तरफ से सो गया और असलियत की तरफ से जाग उठा। गुरु की आँखों से उसने अपने लिए कितने ही फ़ायदामन्द सबक सीख लिये। कहा गया है, "यकनज़र फ़रमा कि गुस्तग़नी शवम् ज़े अबनाये जिन्स" इसका मतलब यह है "ऐसी नज़र कर कि मैं अपने भाई-बन्धुओं की तरफ से बेपरवाह हो जाऊँ।" इस फ़िकरे में गुरु की आँख तकने का मजमून छिपा हुआ है। एक शेर और भी है :—

आ ना के ख़ाकरा बनज़र कीमिया कुनंद ।
आ या बवद कि गोशा-ए चश्मे बमा कुनंद ।।

अर्थ—आहा ! जिनके एक नज़र करने से मिट्टी सोना हो जाती है वो कौनसा दिन होगा कि उनकी एक नज़र हम पर पड़ जायेगी। इसमें भी गुरु की आँख तकने की ही बात है :—

सुख देवें दुःख को हरें, दूर करें अपराध ।
कहें कबीर वो कब मिलें, परम सनेही साध ।।

सच्ची कामयाबी प्राप्त करने के लिए ये दो बातें ज़रूरी हैं—गुरु की आँख का तकना और संसार के स्वप्न की तरफ से आँख का मीचना।

जिसे काम करना हो वो आज ही अपना काम कर ले। जो आदमी आज के काम को कल पर डालता है वो कम-अक़ल और भूला हुआ है। लोग मेरे पास आते हैं और सवाल करते हैं कि आपका आवागमन पर विश्वास है या नहीं है ? मुझे उन पर हँसी आ जाती है। मेरा विश्वास आवागमन पर हुआ या न हुआ इससे ग़र्ज़ क्या है। मैं तो सिर्फ़ ऐसी तालीम पर विश्वास रखता हूँ जिससे इस जन्म में अभी और अगर मुमकिन हो तो आज ही तुम्हारा काम बन जाये। आवागमन का मसला एक दिलचस्पी का मज़मून है। जिस पर विद्या और बुद्धि की दलीलें ढूँढ़ने वाले लट्टू रहते हैं मैं इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर चाहे दे दूँ परन्तु इनसे बचना चाहता हूँ। मेरे पास जो लोग आयें वो सिर्फ़ इस नीयत से आयें कि उनका काम जल्दी हो जाये। अगर उनकी यह नीयत है तब तो मैं उनसे मिलकर खुश हो जाता हूँ और जहाँ तक हो सकता है उनको समझाने की कोशिश करता हूँ। और अगर वो अक़्ली दलील-बाज़ियों में अपना समय बरबाद करना चाहते हैं तो वे मेरे पास न

आयें। जो काम हो मतलब का हो, पढ़ो मतलब के लिए, लिखो मतलब के लिए, नौकरी करो मतलब के लिए, बोलो मतलब के लिए, सुनो मतलब के लिए और जिससे तुम्हारा मतलब नहीं निकलता उसके पीछे क्यों पड़ते हो ? मैं इस विचार का आदमी हूँ और गुरु की कृपा से इस ख़्याल को पल्ले बाँधने के कारण मेरी तमाम गुत्थियाँ सुलझ गई हैं। उलझन मिट गई, कपाट खुल गया और कोई चाहे माने या न माने, और चाहे कोई भले ही इसको मेरा अहंकार कह ले परन्तु मैं वास्तविकता को खुली आँख से देख रहा हूँ और चाहता हूँ कि जो लोग मुझसे मिलें झो इसी ख़्याल से मिलें कि वो भी अपनी गुत्थी सुलझा लें। यह अभी मुमकिन है फिर इसका इमकान है या नहीं इस पर मैं अपनी ज़बान नहीं खोलना चाहता।

जो वक़्त गुज़र गया वो गुज़र गया, वह हाथ से निकल गया। जो वक़्त आने वाला है उसके बारे में पता नहीं कि वह हमारे लिए अच्छा होगा या बुरा। वर्तमान समय हमारे हाथ में है। इससे अगर कुछ फायदा उठाना चाहो तो उठा लो वरना बगोले की तरह संसार में डाँवाडोल फिरते रहो और संसार के सपनों के तमाशे में दुःख उठाते रहो। सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है :—

जो करना हो अब ही करना,
आगे का न भरोसा रखना।

यह गुरु का उपदेश है। जो उनकी आँख को तकने से तुरन्त और उसी समय समझ में आ जाता है बशर्ते कि हमारी आँखें ऐसी समझदार हो जायें जैसी चौराहे में पड़े कुत्तों की होती हैं।

हम जाते हैं तीर्थ करने। क्या मरने के बाद हमको उसका फल मिलेगा ? हम इस वक़्त पूजा-पाठ, सन्ध्या और तर्पण करते हैं। क्या हम मरने के बाद मुक्ति के अधिकारी

बनेंगे ? जिन लोगों का ऐसा ख्याल है मैं उनसे सहमत नहीं हूँ और न उन लोगों का साथ देने के लिए तैयार हूँ। मैं तो इस ख़्याल का आदमी हूँ कि अगर ईश्वर कोई वस्तु है तो मुझे उसका दर्शन अभी मिल जाये और मैं खुली आँख से उसको देख लूँ। यह ज़रूर है कि कई मामले वक़्त चाहते हैं लेकिन इसके माने ये नहीं हैं कि उन्हें दूसरे, तीसरे, चौथे या पाँचवें जन्म पर मुलतवी किया जाये। जब हम पढ़ते, लिखते और नौकरी करते हैं और इसी जन्म में हमको उसका फल मिल जाता है तो फिर परमार्थ का फल हमको क्यों नहीं इसी जन्म में मिल सकता :—

जा को दर्शन इत्त हैं, ता को दर्शन उत्त।
जा को दर्शन इत्त नहीं, ता को इत्त न उत्त॥

यह तो अच्छी बात हुई सारी ज़िन्दगी मज़दूरी करो और इस विश्वास को पक्का करते चलो कि जब मरेंगे तब मज़दूरी मिलेगी। जिनको यह ख्याल पसन्द हो यह उन्हीं के लिए मुबारिक हो। इसी वास्ते सत्पुरुष राधास्वामी दयाल ने अपने क़लाम में फ़रमाया है :—

आज सखी काज करो कुछ अपना।
गुरु दरश तको, छोड़ो जग सपना॥

संसार का स्वप्न क्या होता है और तुम स्वप्न किसे कहते हो ? स्वप्न और ख्याल को लोग एक ही चीज़ समझते है। मैं कहता हूँ तुम्हारी दिली आँखों के सामने जो राज़ है वो सही और बाकी सब वहम और ख़्याल हैं। मेरी राय यह है कि तुम संसार के तमाम मुआमलात को वहम और ख्याल समझ कर सिर्फ़ इसी एक बात के हो रहो जिसे तुम असली मतलब का समझ रहे हो। फिर देखें तुमको सफलता कैसे प्राप्त नहीं होती।

एक सिर हज़ार सौदा का ख्याल जान लेने वाला

साबित होता है। एक सिर में सिर्फ़ एक ही सौदा होना चाहिए। मैं यह भी करूंगा, मैं वह भी करूंगा, मैं दुनिया भी बनाऊंगा, मैं दीन भी बनाऊंगा ये सब शेखचिल्ली की बातें हैं। बनाने की वस्तु केवल एक हुआ करती है उसे जो च हे नाम दे दो। किसी को इस बात की भी तो समझ नहीं है कि दुनिया क्या चीज़ है। वह औरत, बाल-बच्चे, धन-दौलत और बिरादरी के सम्बन्धों को दुनिया मान रहे हैं। नादानो! यह दुनिया नहीं है। नफ़ी किस्म (नहींपने) के ख्यालात का नाम दुनिया है। ऐसे ख्यालात को दिल से दूर कर दो और असलियत के ख्यालात को दिल में जगह दो फिर तुम्हारा काम बन जायेगा। तुमसे किस मूर्ख ने यह कहा कि बाल-बच्चे वग़ैरह दुनिया है। यह सरासर मूर्खता है :—

चीस्त दुनिया अज़ खुदा ग़ाफ़िल बुदन।
नै क़माशे नुकरा ओ फ़र्ज़न्दो ज़न॥

अर्थ—दुनिया सिर्फ़ खदा से ग़ाफ़िल रहने का नाम है। सोना, चांदी, बाल-बच्चे और स्त्री इत्यादि को दुनिया नहीं कहते। खुदा की तरफ से ग़फलत करना दुनिया है। अब यहाँ पर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि खुदा क्या चीज़ है?

खुदा कहते हैं हैपने को, हक़ीक़त को और हस्ती को। मैंने एक साथ खुदा के लिए कितने शब्द इस्तेमाल कर दिये अगर इस पर भी तुम्हारी समझ में बात न आये तो मैं क्या करूं।

खुदा क्या है? हस्ती है। तुम क्या हो? हस्ती हो। जब हस्ती है तो यह तो कोई नहीं कह सकता कि मैं नहीं हूं, मेरी हस्ती नहीं है। जब वो है तो फिर नहीं कैसे होगा और वो असफल कैसे होगा। 'हैपने' का नाम सफलता है और 'नहींपने' का नाम असफलता है। जो आस्तिक है वह

हर तरह से सफल है। जो नास्तिक है उसे तो असफल होना ही चाहिए। जब वह हस्ती नहीं रखता बल्कि नेस्ती रखता है तो वो सफल कैसे होगा। हालाँकि नास्तिक शब्द ग़लत है। संसार में एक भी नास्तिक नहीं है। नास्तिक बनना भूल है और इसी का नाम अज्ञान है।

सत्पुरुष राधास्वामी दयाल के शब्द बिलकुल साफ हैं। वो समझा रहे हैं कि ऐ मेरी आत्मा! दुनिया यानि नहींपने के ख़्यालात को दिल से निकाल दे और गुरु की आँख को देख और ताक, वो वास्तविकता है।

---

१. तुम पढ़े लिखे आदमी हो, जो पढ़ते हो उस पर सोचा भी करो। पुराणों की कोई-२ बातें बहुत प्यारी लगती हैं। ज़िन्दगी मछली से शुरू होती है और बुद्ध में खत्म होती है। मछली से बुद्ध तक सात तबदीली की दर्म्यानी हालतें हैं। अगर यह तबदीलियाँ न होतीं तो मछली बुद्ध भगवान् की सूरत में कैसे आती। बुद्ध आदर्श या इष्ट हैं। तुमको भी अपना आदर्श या इष्ट अपनी नज़र के सामने रखना चाहिए।

२. काल का चक्र है और चला करता है सुबह है शाम है, ज़िन्दगी है, मौत है बताओ इन में से कौन फँसा हुआ है और कौन आज़ाद है दिल को इन बातों से परेशान न करो अभ्यास करो, वर्तमान समय को समझ कर उससे जी लगाओ तुम्हारा फायदा होगा।

—दाता दयाल

सत्संग हजूर परमदयाल
फ़कीरचन्द जी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर
25-11-1973

अज्ञान का जज़बा

दया गुरु क्या करूँ वर्णन, आ हा हा, ओ हो हो ।
लगाया मोहे निज चरणन, ... ।
दिखाया घट में इक गुलशन ... ... ।
सुखी जहाँ शब्द धुन धन धन... ... ... ।
वहाँ से आगे पग धारण ... ... ।
करत रही सुरत गुरु दर्शन ... ... ।
चरण पर वार रही तन मन, ... ।
खेलती सुन्न में संग हंसन, ... ।
भँवर हुए सतपुर धावन, ... ।
परस राधास्वामी हुई पावन,... ... ... ।

राधास्वामी ! आज यह आ हा हा, ओ हो हो का हजूर महाराज का शब्द सुना। मैं सोचता हूँ लोग ऐसे शब्द क्यों गाते हैं। कल भी श्री के. जे. सहाय का पत्र आया

उसका भी यही जज़बा था जो इस शब्द में है। मैं स्वयं इस जज़बे में रहा हूँ और उसमें ऐसे ही तवाहजाद (अन्दर से स्वाभाविक निकला हुआ) शब्द गाया करता था। यह जज़बा कब पैदा होता है ? जब व्यक्ति अपने प्रेम में आकर अपने अन्दर कोई वस्तु देखता है—सूर्य, चाँद या गुरुमूर्ति को देखता है तो उसे बहुत खुशी मिलती है और उस खुशी से उसके अन्दर एक जज़बा पैदा होता है जिसको वह पद्य या गद्य में बताता है। जैसे हज़ूर महाराज ने यह शब्द लिख दिया और के. जे. सहाय ने गद्य में लिख दिया। यह जज़बा अज्ञान से निकलता है। जब तक सच्चाई का ज्ञान नहीं होता तब तक ऐसा जज़बा पैदा होता रहता है। के. जे. सहाय ने कल अपने पत्र में लिखा कि बाबा जी ! मैं अभ्यास में था। मेरे अन्दर प्रकाश हुआ। मैंने बहुत बड़ा सूर्य देखा और उसमें आप विराजमान थे। आपको देखकर मुझे इतनी खुशी हुई कि जीवन में ऐसी खुशी मैंने कभी नहीं देखी और मेरी प्रशंसा के उसने पुल बाँध दिये। तो क्या मैं उसके अन्दर गया था ? नहीं। यह सब उसके विश्वास का ही खेल है। यह जितने भी भक्त हैं—कोई राम का भक्त है, कोई कृष्ण का भक्त है, कोई किसी देवी-देवता का भक्त है या गुरु का भक्त है या यह जितने लोग इनकी प्रशंसा करने वाले हैं वे सच्चाई से दूर हैं तथा अज्ञान में हैं। मगर जब तक कोई अज्ञान में नहीं आयेगा उसका ज्ञान की ओर या सच्चाई की ओर आना भी कठिन है इसलिए मैं इनका खण्डन नहीं करता। यह भी एक स्टेज है लेकिन अज्ञान में आनन्द है तथा खुशी है। के. जे. सहाय एक बुद्धिमान् व्यक्ति है, बैंक का मैनेजर है, काफ़ी वेतन पाता होगा मगर यह बाहरी दुनिया है अन्दर में सच्चाई को समझना कुछ और वस्तु है। मैंने जो उसको पत्र का उत्तर दिया है वह

भी आप लोगों ने सुना है। जो आ हा हा हा कर गये वो भी चले गये, जो ओ हो हो हो कर गये वो भी चले गये, राम और कृष्ण के भक्त भी चले गये और सब ने चले जाना है। राधास्वामी मत की वाणी में आया है :—

'आप आप को आप पहचानो, कहा और का नेक न मानो।'

मैंने अपने आप को पहचाना है लेकिन यह पहचान मुझे किस ने दी ? कृषक जी, दयाल दास, कमालपुर वाली माई या और सत्संगी के. जे. सहाय इत्यादि ने जिन्होंने यह कहा कि मेरा रूप उनके अन्दर प्रकट होता है और उनके काम करता है। क्योंकि मैं नहीं होता इसलिए मुझे यह समझ आ गई कि मेरे अन्दर भी जो कुछ प्रकट होता है— भाव, विचार और रूप-रंग इत्यादि यह सब है नहीं, केवल संस्कार हैं तो मैं इनको छोड़ कर इनसे आगे जाने के लिए विवश हो गया और मुझे सच्चाई की समझ आ गई। इसलिए यदि मैं इस आयु में आप लोगों को अपना सत्तगुरु न मानूं तो और किस को मानूं ? हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे नाम एक शब्द लिखा था :—

तू फ़कीर है कैसा भाई, भूल भरम चित्त लाया क्यों।
तज अज्ञान की बातें जल्दी, ज्ञान ध्यान अलसाया क्यों॥
अँखियाँ उलट तमाशा देखें, अन्तर की लीला न्यारी।
सब कुछ अन्तर तेरे भरा है, इससे आँख हटाया क्यों॥
गुरु तो तेरे घट के वासी, तू गुरु घट में रहता है।
मैं तू भूल भरम है प्यारे, यह सिद्धान्त भुलाया क्यों॥
बाहर भीतर गुरु है व्यापक, कहीं राजा कहीं परजा है।
चेले में गुरु, गुरु में चेला, नहीं तो उसे चिताया क्यों॥
आप आप को आप पिछानो, राधास्वामी की है बानी।
कहा और का नेक न मानो, यह बानी बिसराया क्यों॥

श्री के. जे. सहाय भूल और भ्रम में है। वह समझता

है कि मैं उसके अन्दर लाल सूर्य में बड़े भारी प्रकाश में हज़ारों साधुओं और महात्माओं को सत्संग करा रहा था लेकिन मैं तो था नहीं और न ही मुझे पता है।

महात्मा दयाल दास जी ! यह मंज़िल बहुत कठिन है इस मंज़िल पर तुम अभी ठहर नहीं सकते। क्यों ? मैं कोई अन्तर्यामी नहीं हूँ और न ही तुम्हारे भविष्य के बारे जानता हूँ। मगर क्योंकि मैं अभी तक ठहर नहीं सकता इसलिए कहता हूँ कि तुम इस मंज़िल पर ठहर नहीं सकते। मैं चाहता हूँ कि सुरत सहारा चाहती है इसलिए सहारा लो मगर जिसका सहारा लो उसको पूर्ण मानो। श्री के.जे. सहाय ने मुझे अपना गुरु माना हुआ है और वह अपने हालात मुझे लिखता रहता है। उसका मुझ पर विश्वास है। पिछले पत्र में मैंने उसको लिखा था कि तुमको अन्दर में पर्चे मिल जायेंगे। चूंकि उसका मुझ पर विश्वास है इसलिए उसके विश्वास ने उसे सब कुछ दिखाया। ऐसे ही स्वामी जी पर, हजूर महाराज जी को विश्वास था। उनके विश्वास ने ही उनको उत्साह, आनन्द और खुशी दी। और उन्होंने आ हा हा या ओ हो हो का शब्द लिखा। इसलिए जिस समय उन्होंने यह शब्द लिखा उस समय उनकी पूर्ण ज्ञान की अवस्था नहीं थी। यह तो आन्तरिक बात है अब दुनिया की बात सुनो। अगर तुम यह विश्वास रखोगे कि मालिक जो कर गया ठीक कर गया और जो कुछ हो रहा है यह ठीक हो रहा है तो तुम्हारे इस विश्वास और आस का यह परिणाम होगा कि तुम्हारा काम अवश्य बन जायेगा। मगर हम दुविधा में पड़ जाते हैं कि हाय ! ऐसा न हो जाये, यह न हो जाये और वह न हो जाये। क्योंकि यह मनोमय जगत् है इसलिए उस सोचने के अनुसार ऐसा होना आवश्यक है। यह विश्वास को बात है। यदि व्यक्ति आशावादी रहे तथा

'शिवसंकल्पमस्तु' के नियम पर अटल रहे तो उसकी दुनिया व दीन दोनों बन जाते हैं, Never be dishearten (कभी भी निराश नहीं होना चाहिए)। बस आप लोगों को एक शब्द बता देता हूँ कि यह सारा खेल अपने ही संकल्प हैं। कभी-२ आप कह देते हैं कि हमने तो अच्छा ख्याल लिया और आशावादी भी रहे मगर वह हुआ नहीं। यह भी ठीक है। मगर पहले जो निराशावादी बिचार लिये हुए हैं और उनके जो संस्कार पड़े हुए हैं उनका फल भी तो भोगना पड़ता है। जो वस्तु एक बार पैदा हो गई वह अपना ज़हूर (प्रकटाव) तो अवश्य करेगी तथा फिर उसके बाद समाप्त होगी। यह प्राकृतिक नियम है। अपने किये हुए या सोचे हुए कर्म का फल अवश्य मिलता है इसलिए दुनिया के लिए भी तथा परमार्थ के लिए भी आशावादी रहो।

आज आपको यह प्रमाण दे दिया है कि व्यक्ति को जब तक पूर्ण ज्ञान नहीं होता वह अपने अन्दर के दृश्यों को देखकर प्रसन्न होता है, कोई उस खुशी को पद्य में प्रकट करता है तथा कोई गद्य में प्रकट करता है। के. जे. सहाय ने कल के पत्र में लिखा है कि वह बहुत प्रसन्न है। अब उसको जो खुशी मिली वह कहाँ से मिली ? अपने ही अन्दर से। हम बूंद हैं और वह समुद्र है। यह शरीर सम्पूर्ण सृष्टि का नमूना है अगर मानव को गुरु मिल जाये और उसके सत्संग से बात उसकी समझ में आ जाये तो समुद्र तो उसके अपने ही अन्दर लहरा रहा है उसको वह खज़ाना मिल जाये। ऐसी ही हज़ूर महाराज जी को जो खुशी मिली, जिसको उन्होंने उस शब्द में प्रकट किया है यह स्वामी जी महाराज ने नहीं दी बल्कि यह तो हज़ूर महाराज के अपने ही अन्दर थी और उसको उनके अपने ही उस विश्वास, श्रद्धा और प्रेम ने प्रकट किया क्योंकि यह प्राकृतिक नियम है कि 'जैसा

याल वैसा हाल" और "जैसी आसा वैसी वासा और जैसी करनी वैसी भरनी"।

मैंने कहा है कि जिस समय हज़ूर महाराज जी ने यह शब्द लिखा उस समय उनकी अवस्था पूर्णज्ञान की नहीं थी मेरे साथ यह गुज़री है जो कट्टर तथा मुतस्सब (पक्षपाती) पन्थाई हैं उनको मेरे ये शब्द बुरे लगेंगे लेकिन जो कुछ मैंने कहा है उसका प्रमाण देता हूँ। जब हज़ूर महाराज स्वयं गुरुगद्दी पर आये तो उन्होंने अपनी वाणी में फ़रमाया है कि सत्तगुरु केवल शब्दस्वरूपी राधास्वामी दयाल हैं और उनके चरण प्रकाश हैं। बाहर के गुरु का यह कर्त्तव्य है कि वह जीव को सच्चे सत्तगुरु अर्थात् प्रकाश और शब्द से मिला दे। यही हाल मेरा हुआ। मैं भी ऐसे ही हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की प्रशंसा किया करता था जैसे हज़ूर महाराज जी ने की है। मैं सत्तगुरु की जगह काम करता हूँ तथा सच्चा ज्ञान देता हूँ। जो गुरुमुख और साधगुरु हैं वह जीवों को विश्वास और प्रेम दिला कर चिल्लाते हैं। इसीलिए राधास्वामी मत में साधगुरु हैं जो सत्संग करा कर जीवों को उभारते हैं। यदि यह लोग न हों तो सत्तगुरु क्या करेगा? यह लोग नींव तैयार करते हैं उनमें से फिर कुछ व्यक्ति आगे की उन्नति पर अग्रसर होते हैं। पन्थ को चलाने या गद्दी को चलाने के लिए और शिक्षा है और असली उद्देश्य और है। मेरा मार्ग राधास्वामी धाम या दाता या अकाल से मिलने, उसको जानने और पहचानने का है मैं, बन्दीछोड़ हूँ मगर सब तो बंध छुड़ाना नहीं चाहते। वे तो सांसारिक आनन्द चाहते हैं, मैं सांसारिक आनन्द नहीं दे सकता बल्कि मैं जीव को शान्ति देता हूं। आनन्द और चीज़ है तथा शान्ति और चीज़ है। जो स्वार्थ है वही परमार्थ है मगर एक सांसारिक है और दूसरा आध्यात्मिक है। जो लोग

सांसारिक आनन्द चाहते हैं उनके लिए मेरी शिक्षा इतनी लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकती। इसलिए वह महात्मा या गुरुमुख मुबारक हैं जो जीवों को उत्साहित और आशावादी विचार देकर उनके जीवन को उभारते हैं। इसलिए सांसारिक दृष्टिकोण से साधगुरुओं, हंसों और भक्तों का दर्जा आनन्द देने के लिए मुझसे बड़ा है। मैं उनकी बहुत इज़्ज़त करता हूँ। मेरा काम केवल जीवों को धुर धाम पहुँचाना है।

मेरे विचार में यह सारा खेल सुरत का है। मैं अब इस आयु में अपने शरीर और मन की परवाह न करते हुए राधास्वामी दयाल या अकाल पुरुष जो त्रिलोकी से परे है उसके साथ प्रेम रखता हूँ और वही मेरा इष्ट है। जब भक्ति और प्रेम के शब्द सुनता हूँ तो तुमने कई बार देखा होगा कि मेरे हाथ स्वयं जुड़ जाते हैं तथा सिर झुक जाता है। ऐसा क्यों होता है? मैं जानबूझ कर न तो हाथ जोड़ता हूँ और न ही सिर नवाता हूँ। सुरत जब अपने अन्दर में शरणागत होती है तो शरीर व मन स्वयं ही दीनता के जज़बे में आकर गति कर जाते हैं। इसीलिए तो मैं कहता हूँ कि मानव की सुरत ही मूल चीज़ है। ऐसे ही बाहरी दुनिया में भी होता है। जब तुम किसी प्यारे व्यक्ति से मिलते हो तो तुम सुरत-प्यार के जज़बे में आकर बगलगीर हो जाते हो। यदि वह छोटा है तो उसका मुँह चूम लेते हो, उसको गोद में ले लेते हो या उसको छाती से लगा लेते हो और यदि बड़ा है तो उसके पाँव छूते हो या उससे लिपट जाते हो अतः यह सारा खेल सुरत का ही है।

जहाँ तक हमारी सामाजिक सभ्यता और सामाजिक नियमों का सम्बन्ध है इनमें सुरत काम नहीं करती बल्कि मन और बुद्धि काम करते हैं। किसी का धन्यवाद करना या किसी को राम-राम कहना या जयराम कहना या

असलामालेकम या सत् श्री अकाल कहना या किसी की चापलूसी करना यह सब मन का खेल है। जहाँ सुरत का खेल है वहाँ मान-अपमान या बड़प्पन और छोटापन नहीं रहत । यदि राजा का लड़का और ग़रीब का लड़का आपस में प्रेम करते हैं तो उनमें बड़ाई-छोटाई समाप्त हो जाती है। तुम देखो कि मालिक का एक सच्चा प्रेमी कई बार मालिक को तू कह कर पुकारता है मगर सांसारिक व्यवहार में तू शब्द को बुरा समझा जाता है। हजूर महाराज ने इस शब्द में प्रेम के जज़बे में आकर जो कुछ कहा वह सुरत का खेल है। यदि सुरत में दीनता है तो अदब स्वयं साथ रहता है और यदि सुरत में केवल प्रेम ही है और दीनता नहीं है तो उसका जो बोलचाल है वह भिन्न होगा। हजूर महाराज जी के शब्द में प्रेम के साथ सुरत में दीनता भी है। कई व्यक्ति मालिक या गुरु या अपने इष्ट से प्रेम तो करते हैं लेकिन दीनता नहीं होती तो वह प्रेम के जज़बे में आकर उलाहने भी दे देते हैं।

मेरी शिक्षा और मेरी संगति से आप लोगों का घृणा व द्वेष जायेगा, आपके भ्रम जायेंगे तथा आध्यात्मिकता मिलेगी। सांसारिक लोगों के लिए सब से पहले सुमिरन तथा ध्यान है। मैं अभी तक भी सुमिरन तथा ध्यान करता रहता हूँ। शरीर और मन को छोड़ कर सुरत के साथ-साथ आत्मसमर्पण करता रहता हूँ मगर साथ ही शरीर और मन का भी आत्मसमर्पण हो जाता है।

सबको राधास्वामी !

सत्संग परमदयाल जी महाराज

दिनांक 9—12—1973

सच्चा साधन

कोई भागे सुरत तज यह संसार,
जा जग में पूर्ण सुख नाहिं, खोज करो तुम निज बार।
निज घर है ब्रह्माण्ड के पारा, तीन लोक में काल पसार॥
माया संग दुःखी रहें सब, जीव कोई न जावे भव के पार।
सच्चा सुख है सन्त के देसा, जाते चलो सन्त की लार॥
सत्तगुरु कर उन सेवा करना, प्रीत प्रतीत चरण में धार।
वह दयाल तो है भेद बतावें, सुरत शब्द का मारग सार॥
प्रीत सहित जब करो कमाई, तब जाओ भव सागर पार।
राधास्वामी चरण शरण दृढ़ करले, पाओ उनकी मेहर अपार

राधास्वामी! आप लोग आये हैं। सन्तमत क्या सिखाता है? आज आप लोगों को एक पत्र सुनाता हूँ जो लुधियाना से किसी व्यक्ति ने भेजा है—

लुधियाना
18-11-73

परम सन्त परमदयाल फ़कीर चन्द जी महाराज,
राधास्वामी!

इस आत्मा के धक्के खाते हुए ३५ वर्ष हो गये। ग्रन्थ और पोथियाँ पढ़-२ कर फेंक दिये। दयालबाग आगरा

गया, देहली में सन्त कृपाल सिंह जी महाराज के पास गया, व्यास में बाबा चरण सिंह जी महाराज के पास गया। जगह-२ सत्संग सुने, सन्त, महात्माओं और दीन-दुःखियों की सेवा की। बड़ी-२ थ्यूरियाँ पढ़ीं तथा सनीं। कोई डेरे को बढ़ाने में लगा हुआ है, कोई मानव केन्द्र बनाने में लीन है, कोई मान व प्रतिष्ठा के लिए कार्य कर रहा है, कोई पैसे इकट्ठे कर रहा है, जगह-२ गुरुडम चल रहा है। जीवों की भीड़ उमड़-२ कर आ रही है।

बहुत सुना कि यह आत्मा अनामीधाम से, मालिकेकुल से बिछुड़ कर आई हुई है तथा यह आत्मा पिण्ड, अण्ड, ब्रह्माण्ड, सचखण्ड, अगम, अगोचर, अपार, अनामी देश में वापिस चली जाती है। यह होता है तथा वह होता है। सूर्य, चाँद, सितारे अन्दर में नज़र आते हैं। लेकिन फकीर! दुनिया सब कुछ है। दिल मानता है कि भई! सन्त, महात्मा बताते हैं उन्होंने देखा है, अनुभव किया है। कबीर, गुरु नानक की वाणी है, ये बड़ी उच्चकोटि की हस्तियाँ हुई हैं। भाई फकीरा! सत्य बात तो यह है कि बहुत कुछ सुना मगर देखने में कुछ नहीं आया। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि यह सब ढकोसला ही है। मेरे एक मित्र ने मुझे दो पुस्तकें 'शिव' और 'जनता जनार्दन' दीं। उसमें आपका भी मानवता का झण्डा देखा तो मन में आया कि तुम्हें भी देख लूँ और क्या तू मुझे भी अनामी देश, राधास्वामी देश तक पहुँचा सकता है, क्या तू मेरा रहबर बन सकता है? देख फ़कीरा! सोच ले। सुना है तू परमसन्त और परमदयाल है। अगर तुम दयाल की शक्ति हो तो हाँ कर दो। फिर एक शर्त है—अन्दर-बाहर दोनों ओर सम्भाल करनी पड़ेगी। मेरे मां-बाप भी अन्धे हैं तथा १८ वर्ष से बीमार हैं और चारपाई पर रहते हैं, उठा कर टट्टी-पेशाब कराता हूँ इसलिए यदि

घर में ही रह कर पूरा करा सकते हो तो हाँ करना, नहीं तो आज से मानवता का झण्डा उखाड़ कर कहीं फेंक देना। फिर क्या लाभ ? यदि सच्चा गुरु बन सकते हो तो शीघ्र पता दो और मुझे दिखाओ कि किस प्रकार आत्मा पिण्ड, अण्ड, ब्रह्माण्ड, सचखण्ड होती हुई अनामी देश या राधास्वामी देश में जाती है ? आज तक तो सब कहते ही सुने हैं पर कोई भी आत्मा को खींच कर ऊपर नहीं लाया।

कई वर्ष से आत्मा में एक विचार बार-२ आता है कि इस मनुष्य चोले में आकर यदि अपने घर वापिस राधास्वामी देश में जा कर आत्मा और परमात्मा का अनुभव नहीं किया तो मानव ने कुछ नहीं किया।

आप में अपने आप को पाकर सारी दुनिया को एक झण्डे में लाने की तड़प है। कलियुग के जीवों को देखकर दया आती है। यदि कुछ प्राप्त किया है तो बताओ और मुझे भी दिखाओ। मैं आप जी के पत्र का इन्तज़ार कर रहा हूँ। जल्दी से जल्दी उत्तर देना। यदि आप असली फ़कीर हो और इस आत्मा को भी कबीर, फरीद, गुरु नानक जैसा बना दोगे तभी मानूंगा।

लो फ़कीरा ! उठा लो मानवता का झण्डा यदि सारी दुनिया में प्रकाश ही प्रकाश न कर दिया तो कहना।

वैसे पाँच शब्द मेरे पास हैं। अपनी तवज्जह देना तथा मार्ग-दर्शन करना। अपने सूक्ष्म प्रकाशमान् स्वरूप में अन्दर आकर दर्शन देना तथा मार्ग-दर्शन करना और समझा देना।

यदि हिम्मत है तो आ जाओ। मेरे मन का मन्दिर तुम्हारे लिए खाली पड़ा है तो परमात्मा के नूर से भर दो।

देख लो, मैं कान हूँ ? और मेरे अन्दर कौन झलक मार रहा है ? आध्यात्मिकता की दौलत बाँटने वाले, मैं भी तुम्हारे दर पर झोली फैला कर खड़ा हूँ। तुम्हारे दरबार से खाली न जाऊँ।

इन्हीं शब्दों से मैं पत्र समाप्त करता हूँ और आप जी की इन्तज़ार में हूँ।

Everything should be very secret

आप लोगों ने यह पत्र सुना। मैंने अपने आपको इस संसार में सन्त सत्तगुरु कहा है। मैं अपने आप से प्रश्न करता हूँ कि क्या कोई सन्त, महात्मा किसी व्यक्ति को उस मंज़िल तक पहुँचा सकता है? मैं यह प्रश्न क्यों करता हूँ और यह काम क्यों करता हूँ? केवल इसलिए कि संसार के प्राणियों को सच्ची बात, सच्चा रास्ता और सच्चा साधन जो मेरे अनुभव में आया है वह बताऊँ।

इस व्यक्ति के अन्दर तड़प है, जज़बा है। इसका कारण क्या है? १८ वर्ष से उसके मां-बाप बीमार हैं। वह इस बीमारी से दुःखी है तथा इस दुःख से बचना चाहता है। उसको अपने मन के मनोविज्ञान का ज्ञान नहीं है। मैं अपने आप से यह प्रश्न करता हूँ कि क्या तू या कोई और महात्मा इसको वहाँ पहुचा सकता है? दूसरों के बारे तो मैं कह नहीं सकता मगर अपना अनुभव बता सकता हूँ और जो मेरे गुरुभाई लोग हैं उनको जानता हूँ। यह ज्ञान मुझे सत्संगियों से हुआ। कृषक जा या दयाल दास या कमालपुर वाली माई या सन्त ताराचन्द जिन्होंने अभ्यास किया तथा जिनके अन्दर मेरा रूप प्रकट हुआ या जिन्होंने अपने अन्दर प्रकाश देखे और शब्द सुन। मैं अपने आप से यह पूछता हूँ कि क्या तुमने इनके शब्द और प्रकाश खोले? जब वह तुमको अपने आप में प्रकाशमान रूप में देखते हैं तो क्या तुमको इसका ज्ञान होता है? नहीं। अतः इससे प्रमाणित हुआ कि जो भी वहाँ पहुँच सकता है वह अपनी लगन, अपनी तड़प, अपने परिश्रम और अपनी सच्चाई से ही पहुँच सकता है। मैं इस विषय को छपवाना चाहता हूँ

ताकि लोगों के भ्रम और संशय दूर हो जायें।

गुरु के रूप को न समझ कर और सच्चाई और वास्तविकता को न समझ कर या विश्वास के न होने से मानव के अन्दर भिन्न-२ प्रकार के भ्रम पैदा हो जाते हैं। मैंने अपने आप को सन्त सत्तागुरु कहा है। सत्तागुरु नाम है सच्चे ज्ञान का। जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके अपने विश्वास, अपनी लगन, अपनी तड़प और अपनी सेवा का फल मिलता है। कोई गुरु या कोई महात्मा किसी को कुछ नहीं देता। यदि देता है तो उसको केवल ऐसा विचार देता है जिससे कि जीव को सरल तरीक़ा मिल जाये। मैं अपने बारे बताता हूँ कि मैंने १९०५ में नाम लिया, १९१६ तक मेरे अन्दर केवल प्रेम ही प्रेम था तथा विश्वास ही विश्वास था। न मुझे शब्द सुनाई दिया तथा न ही मैंने प्रकाश देखा। उस समय मैं बहुत रोया करता था। मेरे रोने का ज्ञान पण्डित पुरुषोत्तम दास तथा सेठ दुर्गादास या और व्यक्ति जो मेरे साथ बसरे-बगदाद में थे उनको है। १९०५ से १९१६ तक मुझे क्यों कुछ नहीं मिला? इसलिए कि मेरी १३ वर्ष की आयु में शादी हो गई तथा १५ वर्ष की आयु में गृहस्थ जीवन में दाखिल हो गया था। तो मेरे अनुभव में आया है कि जो व्यक्ति ज़्यादा विषय-विकार का जीवन गुज़ारता है या जिसका शारीरिक व मानसिक ब्रह्मचर्य गिर जाता है उसको यह मंज़िल नहीं मिलती :—

जहाँ काम तहाँ नाम नहीं, जहाँ नाम नहीं काम।
रवि रजनी दोऊ न मिलें, एक ठाम एक याम॥

हमारी अशान्ति चिन्ता और भ्रमों का सबसे बड़ा कारण हमारे शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य की गिरावट है। चार दिन हुए एक नौजवान लड़का आया। मैंने उसको देखा और पूछा कि किसलिए आये हो? वह कहने लगा

कि बाबा जी ! मैं बहुत अशान्त रहता हूँ। पढ़ने में दिल नहीं लगता। मैंने उससे कहा कि धर्म से कहो कि क्या तुम अपने हाथ से वीर्य नष्ट नहीं करते ? वह मान गया। क्योंकि मैंने अपने आपको सन्त सत्तगुरु कहा है इसलिए संसार को सच्चा ज्ञान जो मेरी समझ में आया वो बता कर गुरु ऋण से उऋण होना चाहता हूँ।

यह पत्र जि की ऊपर नक़ल की गई है इस पत्र के लिखने वाले को मैंने देखा नहीं तथा न ही मैं इसे जानता हूँ। यदि देख लेता तो शायद कुछ बता देता। दुनिया ने गुरुमत को समझा नहीं। गुरुमत भवसागर से पार लगाने के लिए है। जिन्होंने अपना ब्रह्मचर्य खोया है या खोते हैं उनको यह वस्तु नहीं मिल सकती। यह मेरे जीवन का अनुभव है। इसका प्रमाण देता हूँ। किसी गाँव का रहने वाला एक कप्तान था उसको मालिक के मिलने का शौक था। वह किसी महात्मा के पास गया तथा कहा कि मुझे मालिक से मिला दीजिये। उन्होंने कहा कि हाँ, मिला दूंगा। उस कप्तान ने उस महात्मा को दस हज़ार रुपये दिये तथा उनकी कार का ड्राईवर बन गया। दस वर्ष तक उनकी कार चलाई। इस दस वर्ष के समय में न उसका प्रकाश आया और न शब्द खुला। उसने उस महात्मा पर दावा कर दिया कि उन्होंने मेरे साथ वायदा किया था कि मैं तुमको राम या मालिक से मिला दूंगा लेकिन मुझे आज तक कुछ नहीं मिला। उस महात्मा के शिष्यों ने मिल-मिलाकर निर्णय करवा दिया। यह समाचारपत्र में निकला था।

ऐसे ही इस व्यक्ति ने पत्र में लिखा है कि गो ! तुम में सच्चाई का जज़बा है मगर तुम बदतमीज़, बदअखलाक और बेअदब हो। आठ वर्ष हुए वह कप्तान मेरे पास आया

और बड़े गौरव से उसने मुझे बताया कि मैंने दावा किया तथा चालीस हज़ार रुपया वसूल किया है। यह गुरुमत सब ढोंग है। मैंने उससे कहा न तुम शब्द सुन सकते हो तथा न प्रकाश देख सकते हो। उसने पूछा, क्यों? मैंने कहा—क्या तेरी शादी नहीं हुई? उसने कहा—नहीं। मैंने कहा कि अब तक भी अपने हाथ से वीर्य नष्ट करते हो। वह मेरी इस बात को मान गया कि आप जो कुछ कह रहे हैं यह बिलकल ठीक है। मैंने कहा कि जो आदमी या औरत व्यर्थ ही और ज़रूरत से अधिक अपने वीर्य को नष्ट करते हैं उनके भाग्य में शब्द और प्रकाश नहीं हैं। वह कहने लगा कि मुझे यह बात आज तक किसी ने नहीं बताई। मैंने कहा कि मैं इस बात का ज़िम्मेवार नहीं हूँ। यह तो आपका गुरु जाने या आप जानें।

इसलिए मैं सदैव स्पष्ट कहता हूँ चाहे किसी को अच्छा लगे या बुरा लगे। यदि तुम शारीरिक और मानसि ब्रह्मचर्य को नष्ट करते रहोगे तो तुम्हारी सुरत ऊपर नह चढ़ सकती। इस पत्र को लिखने वाले के मन में ऐस परेशानी क्यों आई? इसका मैं उसको यह उत्तर दे रह हूँ। दूसरे उसके घर में उसके मां-बाप १८ वर्ष के लम्बे समय से बीमार पड़े हैं। वह लिखता है कि मेरे दीन और दुनिया का ठेका लो। कोई सन्त, महात्मा या महापुरुष किसी का ठेका नहीं ले सकता। जब सन्तों ने स्वयं बीमारियों से दुःख सहे तथा उनके घरों में भी अशान्ति रही, उनकी सन्तान के चरित्र बिगड़े, सन्तान आज्ञाकारी न रही तथा वह कुछ न कर सके तो मैं कैसे मानूं कि कोई सन्त किसी दूसरे का ठेका ले सकता है। अपना-२ कर्म सब को भोगना पड़ता है। जैसा करोगे वैसा भरोगे। कबीर साहिब ने भी यही कहा है :—

अरे मन धीरज काहे न धरे।
शुभ और अशुभ कर्म पूवले रत्ती घटे न बढ़े ।।

यदि सच्चे मन से प्रार्थना करो तो हो सकता है कि तुम्हारे विचार की शक्ति से और तुम्हारे विश्वास के कारण तुमको कुछ प्राप्त हो जाये। जैसे लोग मुझे लिखते रहते हैं कि बाबा जी ! आप आये, आप प्रकट हुए, आप ने यह किया आप ने वो किया लेकिन न तो मैं कहीं जाता हूं तथा न ही मुझे कोई ज्ञान होता है।

हजूर दाता दयाल जी महाराज का जिला रोहतक का एक सत्संगी था, उनसे बहुत प्रेम किया करता था। धाम में प्रत्येक वर्ष भण्डारे के लिए काफ़ी अनाज इत्यादि लेकर जाता था। हजूर दाता दयाल जी महाराज उसके गाँव में और उसकी जमीन में कुटिया बनवा कर छः माह रहे। वहाँ उन्होंने एक पुस्तक "कबीर योग" लिखी थी। उनके प्रसाद से कई व्यक्तियों की तपेदिक की बीमारी ठीक हो गई थी। उस व्यक्ति के भाई को भी तपेदिक हो गई तथा वह उसको हजूर दाता दयाल जी महाराज के पास धाम में ले गया। उन्होंने फरमाया कि यह ठीक हो जायेगा तुम विश्वास रखो लेकिन वह ठीक न हुआ और मर गया। उस व्यक्ति ने फिर हजूर दाता दयाल जी महाराज को बहुत बदनाम किया। मैं यह प्रमाण दे रहा हूँ कि कोई सन्त किसी के कर्म को न ही टाल सकता और न ही काट सकता है। मैं तो यही कहूंगा कि ईश्वर और परमेश्वर भी किसी के कर्म को काट नहीं सकते। ईश्वर तो एक नियम है। कर्म का क़ानून तो ऐसा है कि जो करोगे वो भुगतन पड़ेगा। इसलिए मैंने जीवन में अनुभव के बाद यह समझा है कि परमाथ तो बहुत दूर है, मानव को पहले मानवता सीखनी चाहिए ताकि वह आध्यात्मिकता का अधिकारी बन

सके। आपको कहना चाहता हूँ कि यदि अपने जीवन को बनाना चाहते हो तो पहले मानव बनो या सच्चरित्र बनो और बजुर्गों के नियमानुसार चलो। पिछले समय में लड़के को २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रहने की आज्ञा थी। क्यों? हमारे अन्दर हमारा वीर्य ईश्वर का स्थूल रूप है। यदि उसको आवश्यकता से अधिक नष्ट करोगे तो अशान्ति का आना आवश्यक है और तुम सुखी नहीं रह सकोगे। जो कुछ हमारे साथ होता है यह कुछ इस जन्म के कर्मों का फल है और कुछ प्रारब्ध कर्मों का फल है। इसलिए हमको अपना कर्म अच्छा बनाना चाहिए। अपने स्वार्थ के लिए किसी से धोखा और फरेब नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति इन नियमों पर चलता है वह सन्तमत के अनुसार अपने आद घर वापिस जाने का अधिकारी होता है।

मेरे पास बहुत लोग आते हैं लेकिन क्या यह अपने आद घर वापिस जाने के लिए आते हैं? यह तो अपनी सांसारिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आते हैं। इनके अपने ही विश्वास से इनके काम हो जाते हैं। मुझे क्योंकि मेरे पिछले जन्मों के कर्मानुसार यश मिलना था इसलिए यह लोग समझते हैं कि बाबा जी हमारे काम करते हैं। मैं किसी के काम करने वाला कौन हूँ!

चुनौर (आन्ध्र प्रदेश) के एक व्यक्ति के लड़का नहीं था। वह मेरे पास आया तथा प्रसाद ले गया। उसके लड़का पैदा हुआ। उसने बहुत खुशी मनाई, मेरी बहुत प्रशसा की और मुझे तार दी जिसमें बासठ शब्द थे। मैंने इसको उत्तर दिया कि जो कुछ हुआ तेरे कर्म से हुआ और जो कुछ होगा तेरे कर्म से होगा। कल फिर तार आई कि लड़का मर गया। अब बताओ जो लोग यह समझते हैं कि गुरु के प्रसाद से लड़का हो जाता है या और काम हो जाते

हैं लेकिन यदि मेरे प्रसाद से उसके लड़का हुआ होता तो वह मरता क्यों ? मैं स्पष्ट कहता हूँ लेकिन दूसरे लोग सच्चाई नहीं बताते तथा अज्ञान में रहते हैं। लेकिन जब उनके काम नहीं होते तो फिर वो ऐसे पत्र लिखते हैं जैसे इस लुधियाना वाले आदमी ने अपने इस पत्र में लिखा। मैं तो उसे जानता भी नहीं हूँ। गुरु तो ज्ञान और अनुभव का नाम है। मगर यह भी तब मिलता है जब तुम्हारा किसी जगह पर पूर्ण विश्वास होगा। अगर विश्वास और श्रद्धा नहीं है तो कुछ नहीं मिलता, विश्वास काम करता है। नामदेव और धन्ना भक्त का विश्वास हो तो था। मुझे इस बात का विश्वास हो गया कि लोगों के काम होते हैं मगर मुझे पता नहीं होता। यह सारा खेल विश्वास का है। सन्त तारा चन्द जी ने मुझे बताया कि वह कबोरपन्थी मठ में गये, वहाँ एक औरत को देखा जिसका बहुत ऊँचा अभ्यास था। उन्होंने उससे पूछा कि माई ! तुम कौनसा नाम जपती हो ? उसने उत्तर दिया कि 'बकरी की तीन टांग'। वह सुन कर बहुत हैरान हुए तथा वहाँ के मठ के मुखिया से पूछा कि आपने इसको क्या नाम दिया है ? उसने कहा कि यह नाम के लिए मुझे प्रतिदिन तंग करती थी। एक दिन मैंने क्रोध में आकर कहा कि नाम है "बकरी की तीन टांग"। इसने उसी को नाम समझ लिया तथा उसको जपती है और अब इसकी जो हालत है वह आप देख रहे हैं। तो इससे क्या प्रमाणित हुआ ? कि यह सारा खेल तुम्हारे अपने विश्वास का है।

मैंने यह सिरदर्दी क्यों ली ? मैं तो एक साधारण भक्त था। राम, कृष्ण या अवतारों, देवी-देवताओं को मानने वाला था। मौज मुझे हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरणकमलों में ले गई। मैं उनको राम समझकर पूजा करता था। उन्होंने मुझे सन्तमत की शिक्षा दी जिसमें सब

का खण्डन था। मैं घबराया। हजूर दाता दयाल जी महाराज को तो मैं छोड़ नहीं सकता था। उस समय मैंने प्रण किया था कि मैं सच्चा और पक्का होकर इस रास्ते पर चलूंगा और अपना अनुभव संसार को बता जाऊंगा। क्योंकि मेरे ज़िम्मे यह काम करने की ड्यूटी थी इसलिए मैं यह काम सच्चाई से कर चला ताकि जो व्यक्ति अपने घर जाना चाहते हैं या अपने सांसारिक जीवन को खुशहाल बनाना चाहते हैं उनको असली तरीक़े का पता लग जाये। आजकल अनधिकारी लोगों को नाम दिया जाता है उनको असली ढंग का तो पता नहीं है वह तो केवल मांस और शराब मना करते हैं मगर इससे तो बेड़ा पार नहीं होगा। और भी बहुत सी बातें हैं जो प्रत्येक जीव के लिए भिन्न-२ होती हैं।

हजूर दाता दयाल जी महाराज के चोला छोड़ने के बाद एक बार मैं राधास्वामी धाम गया वहाँ गोरखपुर से कुछ आदमी आये हुए थे। उनमें एक नवयुवक था। वह बहुत मस्त रहा करता था। लोग उसकी बहुत इज़्ज़त किया करते थे तथा उसे भक्त कहा करते थे। मैंने उसको दूर से ही देखा तथा फिर जाकर उसका बाजू पकड़ लिया और कहा कि मैं केवल तुम्हारे लिए ही यहाँ आया हूँ। यह सुनकर लोग हैरान हो गये।

"मैं दुनिया को कुछ कहना चाहता हूँ, कुछ भेद देना चाहता हूँ"।

फिर सत्संग हुआ। मैंने कहा—तू इस जगह ठहर। जब और व्यक्ति चले गये तो मैंने उससे अलग में पूछा कि सत्य बताओ कि तुम अपने हाथ से अपना ब्रह्मचर्य नष्ट करते हो? वह मान गया। मैंने उससे कहा कि मूर्ख! तुम मर जाओगे। यह जो तुम इतने प्रेम से गाते हो और लोग तुमको भक्त समझते हैं यह वास्तव में तुम्हारे ब्रह्मचर्य की

कमी है तथा तुम्हारी मानसिक हालत खराब है। वह इस बात को मान गया। मैंने उसको काफी हिदायत की। एक वर्ष के बाद वह मुझे फिर मिला। मैंने पूछा "बताओ तुम्हारा क्या हाल है"? कहने लगा "महाराज! इस पूरे वर्ष में केवल एक बार गिरा हूँ।" मैंने कहा, "अब तुम बच जाओगे।" यह मेरा ज्ञान है। हम लोग उन दीवानों के पीछे फिरते हैं जो सिर मारते हैं। ज़रा मेरी बात को सोचो! मैंने अपने आपको सन्त सत्तगुरु वक़्त कहा है। मैं अपनी ड्यूटी को पूरा कर जाना चाहता हूँ तथा सच्चाई बताये जा रहा हूँ।

एक गद्दीपति चोला छोड़ गया तो उसके शिष्यों में से एक शिष्य ने सिर मारना प्रारम्भ कर दिया और कहने लगा कि मुझ में धार आ गई है। एक डाक्टर को उसने अपना हमराज़ बनाया हुआ था। लोगों ने उस सिर मारने वाले शिष्य को गद्दी पर बैठा दिया। कुछ समय के बाद उस गुरु का एक शिष्य जोकि डाक्टर भी था तथा उसका चिकित्सक भी था, वह मेरे पास आया और लगा बहुत सी बातें करने। मैंने उससे कहा कि मेरा ज्ञान कहता है कि तुम्हारे गुरु को जरयान या शुगर का रोग है। उसने कहा कि जो कुछ आप फ़रमा रहे हैं यह बिलकुल ठीक है लेकिन आपको कैसे मालूम हुआ? मैंने कहा कि मैं मनोविज्ञान को जानता हूँ। मैं अपनी बात जानता हूँ कि जब बचपन में मेरा ब्रह्मचर्य गिर गया तो मैं भी मस्ती में गाया करता था तथा कई बार बेहोश हो जाया करता था। यह मेरी आप-बीती है। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि फ़कीर चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना और मैं शिक्षा को बदल रहा हूँ। जिनके भाग्य में है वह मेरी बात को समझ कर अपने जीवन को बना लेंगे

और जिनके भाग्य में नहीं है उनके लिए मैं क्या कर सकता हूँ और मैं यह दावा भी नहीं करता कि जो कुछ मैं कहता हूँ ठीक है, यह तो मेरा अनुभव है। यदि मैं बसरे-बग़दाद न जाता तो पता नहीं मेरा क्या हाल होता।

हजूर दाता दयाल जी महाराज के चोला छोड़ने के बाद श्री कुबेर नाथ के पत्र मेरे पास आते रहे तथा मैं उनका उत्तर देता रहा। श्री महेश्वर नाथ वकील का भी पत्र आया। उन्होंने लिखा कि सत्तलोक, अलख लोक, अगम लोक और अनाम क्या हैं? और मैं वहाँ कैसे जाऊँ? मैंने उसके किसी पत्र का भी जवाब नहीं दिया। मैं श्री महेश्वर नाथ को नहीं जानता था। फिर जब मैं राधास्वामी धाम गया तो श्री कुबेर नाथ मेरे पास आये तथा कहा कि महाराज! आपने मेरे पत्रों का उत्तर तो दिया लेकिन श्री महेश्वर नाथ को आपने कोई उत्तर नहीं दिया। मैंने कहा कि उसके पत्र पढ कर मेरा ज्ञान कहता है कि उसको जरयान या शूगर है तथा वह रोगी है। वास्तव में कुबेर नाथ ने मेरी परीक्षा के लिए मुझसे लिखवाई थी। श्री कुबेर नाथ ने कहा, महाराज! उसने अपने पत्रों में अपनी बीमारी का तो कोई जिक्र किया ही नहीं है। मैंने कहा कि यह मेरा ज्ञान है। मैं मनोविज्ञान जानता हूँ। उस समय श्री कुबेर नाथ ने मुझे सिर नवाया तथा सत्तगुरु माना।

सहस्रदल कमल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न और भँवर गुफा यह जितने भी दर्जे हैं यह इन्सान के मानसिक भाव और ख़्याल का खेल है और इससे आगे सत्, अलख, अगम या आत्मा और सुरत की चेतन अवस्थाओं के बोधमान का खेल है। इससे परे जो जात है, अकाल है, नाम है वह आधार है। जब तक कोई व्यक्ति शारीरिक और मानसिक बोधमान को भूल नहीं सकता या छोड़ नहीं सकता वह

सत्, अलख और अगम में जा नहीं सकता। मेरे लिए यह बहुत कठिन था। यह तो आप सत्संगियों की बदौलत जो यह कहते हैं कि मेरा रूप उनके अन्दर प्रकट होकर उनकी अनेक रूप से सहायता करता है वह मैं नहीं वह तो उनका अपना ही मन होता है। इसलिए मैं इस मन को छोड़ने के लिए विवश हूँ। मुझे यह समझ आ गई कि यह माया और काल है, तब मैं ऊपर जा सका।

इसलिए अगर कोई अपने आद घर वापिस जाना चाहता है तो वह अपने शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य को सम्भाले। दुनिया में जो कुछ हो रहा है, होता है या हो चुका है यह सब हमारे अपने ही कर्म का फल है। ऐसा समझ कर जिसको उदासी आ जाती है उसके लिए नाम है :-

विषयों से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन सन्तान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे॥

जब तक यह हालत नहीं होती तब तक न तो किसी को शान्ति मिलती है तथा न ही सत्तलोक मिलता है और साथ ही जब तक यह ज्ञान नहीं होता कि भँवर गुफा यानि सोहंग तक मैंपना है और मन का खेल है और जब तक कोई इस खेल को छोड़ेगा नहीं वह सत्तपद जो केवल शब्द और प्रकाश का मण्डल है वहाँ तक जा नही सकता। जिसको अपने आप में समाना आता है वह उस चीज में लय हो जाता है जो हमारे अन्दर प्रकाश को देखती है तथा शब्द को सुनती है वह जो चीज है वह है प्रत्येक व्यक्ति की अपनी ही ज़ात और अपना हो आप और वह अकह, अपार, अगाध और अनाम की अंश है : —

इतना ऊँचा जो कोई चढ़े, रूप, रंग रेखा से टरे।

आप लोग आ जाते हैं मेरे ज़िम्मे ड्यूटी है तथा मैं अपनी ड्यूटी को पूरा कर जाना चाहता हूं। हम गुरुओं ने

जनता को सच्चाई नहीं बताई। अपनी गद्दियों, अपनी इज़्ज़त और मान के लिए रोचक और भयानक बातें बना-२ कर लोगों को अपने पीछे लगाया। लोगों को तीस-२ और चालीस-२ वर्ष अभ्यास करते हो गये लेकिन किसी को कुछ नहीं मिला। किसी ने तो यह समझ लिया कि यह मेरी ही ग़लती है और इस बात से शान्ति प्राप्त की। कई ऐसे भी हैं जो गुरुओं को कोसते भी हैं।

असली और सच्चा गुरु तो तुम्हारे अन्दर रहता है वह तुम्हारी अपनी ही ज़ात है। अगर तुम अपने जीवन पर दृष्टि डालो कि तुमने जीवन भर क्या किया है तब तुमको हक़ीक़त और असलियत के बारे पता चलेगा। अब तुम यह प्रश्न करोगे कि फिर क्या व्यक्ति बाहरी गुरु की टेक छोड़ दे? सुनो, तुमको लाभ नहीं होगा क्यों क यह तो एक प्राकृतिक जज़बा है। नक़ल करने से कुछ नहीं होता। यह तो जिसके भाग्य में होता है उसको मिलता है। धन्ना भक्त को पत्थर से मिल गया लेकिन आज लोग पत्थरों को पूजते हैं उनको क्यों नहीं मिलता और उनके काम क्यों नहीं होते? यह सब व्यक्ति के विश्वास पर निर्भर है लेकिन विश्वास करना भी अपने वश की बात नहीं है :—

जिस पर दया आद कर्त्ता की, सो यह नेहमत पावे।

आज गुरुमत का ज़ोर तो गया लेकिन किसी ने सच्चाई नहीं बताई इसलिए लोग निराश हो गये तथा ऐसे-२ पत्र लिख देते हैं जैसे इस व्यक्ति ने लिखा है। यह जज़बा तो सब के अन्दर होता है मगर कोई बताता नहीं। जो बाहरी बातों को ही देख कर विश्वास कर सकते हैं, उनका विश्वास तो आज भी टूटेगा और कल भी। इसीलिए मैंने शिक्षा को बदल दिया कि सच्चाई को समझो और नियमों पर चलो तब तुम मंज़िल पर पहुंच जाओगे :—

माया छाया एक है, दोनों में सार की गम कहाँ।
यह समझ आ जाये, होगा उदास न तू कभी ॥

गुरु की दया पर विश्वास रखो। गुरु की दया क्या है? गुरु समझ देता है तथा माया और छाया का पता देता है। मुझे यह समझ नहीं आती थी और एक अज्ञानी भक्त था। आप लोगों के अनुभवों से मुझे यह समझ आई। इसीलिए तो मैं आप लोगों को अपना सत्तगुरु मानता हूँ। माया है हमारी आस जो हमारे अन्दर से निकलती है और उसका जो फल मिलता है वह छाया है। अब हजूर दाता दयाल जी महाराज का चोला तो है नहीं जो उनके एहसान के बदले उनकी सेवा करूँ। असली दाता दयाल जी तो मेरे अन्दर में हैं बाहर में ये सत्संगी लोग मेरे सत्तगुरु हैं। अब मैं भीलवाड़ा गया था। क्यों गया था? एक तो मेरे अन्दर मेरे सत्तगुरु स्वरूप सत्संगियों की सेवा का दिली जज़बा है। इसीलिए वहाँ जाकर मैंने कृषक जी और दयाल दास जी को माथा नवाया तथा दूसरे उनको यह समझाने के लिए कि कहीं मान और बड़ाई में मत फँस जाना और अपनी ज़िन्दगी नष्ट मत कर लेना। क्योंकि आजकल के गुरु ग़लत मान लेते हैं तथा तीसरे कर्म का चक्कर भी है जिससे लेना है, उससे ले लेना है तथा जिसको देना है उसको हर हालत में देना है। जो लोग दुनिया के चक्कर में हैं उनके अज्ञान का नाश नहीं होता क्योंकि उनको तो दुनिया चाहिए। उनके लिए अज्ञान आवश्यक है और वह ऐसा ही विश्वास रखें उनको दुनिया मिलेगी। सांसारिक चाह रखने वाले के लिए अज्ञान आवश्यक है और जो अपने घर जाना चाहते हैं उनके लिए ज्ञान है, ज्ञान सबके लिए नहीं है। जो एक का सहारा पकड़ता है वह सफल हो जाता है लेकिन जो आज राम को पूजता है कल कृष्ण को पूजता है, कभी देवी

को पूजता है, कभी गरु को पूजता है, कभी कहीं जाता है और क्योंकि उसका कहो भी विश्वास नहीं है इसलिए वह असफल रहता है। वह मालिक तो सब में है मगर जीव का विश्वास नहीं है :—

कैसे अपने रूप की आती समझ प्यारे तुझे,
आया वर्ष में पक्ष मास में गुरु के पास न तू कभी।

तुम तो कभी गरु के पास आये ही नहीं तो तुमको असलियत का पता कैसे लगे ! लोग मुझ पर विश्वास करते हैं तथा उनके विश्वास के कारण उनके काम होते रहते हैं लेकिन लोग यह समझते हैं कि बाबा जी हमारे काम करते हैं इसलिए उनके अज्ञान को मिटाने के लिए मैंने सच्चाई बता दी :—

नाम से मिटते हैं संकट, नाम गुरु का मन्त्र है।
नाम से काटा है माया जाल, फँस न तू इसमें कभी ॥

तो फिर नाम क्या है ? नाम गुरु का मन्त्र है। गुरु की राय और परामर्श जो तुम्हारी प्रकृति के अनुसार गुरु बताता है तुम्हारे लिए वही नाम है। जब तक कोई गुरु के परामर्श पर अमल नहीं करता उसको कुछ नहीं मिलता चाहे वह कितना ही नाम क्यों न जपे :—

अब संभल जा नाम में, विश्राम आठों थाम ले।
किया राधास्वामी नाम से, दुःख का नाश न तू कभी ॥

दुःख का नाश न सुमिरन से होगा और न ध्यान से होगा। हाँ, आसपास हालतों में तो कोई कष्ट दूर हो जायेगा लेकिन अपने कर्म के चक्कर का मुकाबला विचार से और हिम्मत से करना चाहिए। तुमने सहारा लेना है चाहे प्रेम से लो, चाहे विश्वास से लो, चाहे सुमिरन और ध्यान से लो और चाहे ज्ञान और अनुभव से लो। हम ने मन का सहारा देना है। मैं अभी तक भी हजूर दाता दयाल

जी महाराज के रूप का सहारा लेता हूँ।

साधारणतया लोगों में यह ख्याल पाया जाता है कि गुरु महाराज फूंक मार कर हालत को बदल देते हैं। कभी मेरी भी यही हालत थी लेकिन व्यक्ति का विश्वास काम करता है। बम्बई का रहने वाला एक व्यक्ति मिस्टर रसूल आज़ाद है। उसमें सभी प्रकार के अवगुण थे लेकिन मैं तो उसको जानता नहीं था। मैं बम्बई गया, वह भी मेरे सत्संग में आया होगा और मेरा सत्संग उसने सुना होगा लेकिन मुझे कुछ मालूम नहीं। पिछले वर्ष वह होशियारपुर मेरे पास आया। तब उसने बताया, बाबा जी! कोई ऐसा अवगुण न था जो मुझमें न हो। आप बम्बई गये। मैंने वहाँ आपके दर्शन किये तथा आपका सत्संग सुना। अब आपकी दया से मेरे सब अवगुण जाते रहे। अब मैं प्रतिदिन २ रुपये के फूल आपकी फोटो पर चढाता हूँ। अब वह यहाँ भी हर मास १५० रुपया भेजता है।

अब मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि मैं तो उसको जानता तक नहीं था। उसके अवगुण किसने दूर किये! मैंने तो कुछ किया नहीं। मैं इस परिणाम पर आया कि जब किसी चीज़ का समय आ जाता है तो प्रकृति स्वयं उसके लिए कोई प्रबन्ध कर देती है। यदि मैं किसी के अवगुण निकाल सकता होता तो मैं तो सब के अवगुण दूर कर देता।

ऐ मालिक! बचपन से ही मुझे तेरी खोज थी। तुमको, तेरी लीला को जानने की इच्छा थी। आखिर यह समझ आई कि तेरी लीला का कोई अन्त नहीं तथा उसे कोई नहीं जान सकता। अब किस बात पर ठहरूँ? शरणागतम्:—

तेरी लीला कौन जाने, तू तो अपरम्पार है।
एक दृष्टि से तेरी, दुःखियों के बेड़े पार हैं॥

वह मालिक एक शक्ति है। इसी से ही सब कुछ होता है। पिछले जन्मों के कर्मों के कारण यश मिलना था वो मिल गया। लेकिन शुक्र यह है कि मैंने इसका नाजायज़ लाभ नहीं उठाया। सबको राधास्वामी!

सत्संग

[गतांक जनवरी पृष्ठ 43 से आगे]

करते हुए भी सत्संगियों और जीवों की सेवा नहीं छोड़ी—नहीं छोड़ी --नहीं छोड़ी। वह व्यक्ति महा-मूर्ख होगा जो उनके कहने पर नहीं चलेगा। प्रो० रोडन हाइज़र, जो अमेरिका में अध्यात्म के विख्यात प्रोफेसर हैं, को जब पता चला कि महाराज जी बीमार हो कर पिट्स बर्ग के हस्पताल में हैं, तो वह अपनी पत्नी और लड़के के साथ मेरे पास आया और हम कार से वहाँ गये। महाराज जी बहुत कमज़ोर हो गये थे और उन्हें ग्लूकोज चढ़ाया जा रहा था किन्तु हमें देखते ही बड़े प्रसन्न हो गये। डाक्टर कहने लगा, "आप के आते ही क्या हो गया कि इनकी हालत ही बदल गई, चेहरे पर चमक आ गई!" हमें सत्संग देने और उद्‌बोधन देने के लिए, कष्ट में होते हुए भी अपने शरीर को स्फूर्ति देते हुए बोले, "टेप रेकार्डर लाये हो? मेरा आखिरी सत्संग टेप करो।"

प्रो० रोडन हाइज़र दूसरी गुरु पूर्णिमा पर अपने परिवार सहित अमेरिका से होशियारपुर आया और महाराज जी की फोटो के सामने सिसकियाँ भर-भर कर ज़ार-ज़ार रोने लगा। एक अमेरिकावासी जिससे कोई रिश्ता नहीं, इतना रोया कि परदेसी ने उसे चुप कराया। वो कहने लगा कि जब महाराज जी अमेरिका में हस्पताल के बिस्तर में पड़े हुए थे, और मुझे देखा तो पूछने लगे, "प्रोफेसर, में तुम्हारी क्या सेवा करूँ?" उनकी ऐसी दयालुता पर मुझे रोना आ रहा है। फ़कीर अपने कष्ट की परवाह न करते

हुए, औरों को कष्ट में देख कर दुःखी हो जाते हैं और दया से द्रवित हो जाते हैं।

'निज परिताप द्रवै नवनीता, पर दुःख देखि सुसंत पुनीता।'

'है फकीर का नाम पियारा, मैं फकीर का दासा।
तन मन धन फकीर पर वारूं, बसूं सुसंग सुबासा॥'

ऐसे फकीर के सत्संग में तो सब कुछ न्यौछावर करके भी आना चाहिए। फकीर कुछ कहे नहीं तो भी उसकी Radiation से जीव को शान्ति मिल जाती है।

'कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नासें पल में, जब फकीर जग आई॥'

शुरू में तो फ़कीरी ज़रूर कठिन लगती है लेकिन अब मुझ कठिन नहीं लगता। अब तो जब तक सत्संगियों की सेवा नहीं कर लेता, मन को चैन नहीं मिलती। जब तक मैं सत्संग नहीं दे लेता, मेरा गला भी ठीक नहीं रहता। फ़कीर जब संसार में आते हैं तो जीवों के बन्धन अनायास कट जाते हैं। महाराज जी के अवतरित होने से कितने ही जीवों के बन्धन कट गये, और बन्धन काटने को ही आगे काम करने के लिए आज्ञा दी :—

'जो फ़कीर मोहिं दर्शन देवे, अपना भाग्य सराहूँ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फ़कीर पहनाऊँ॥
मैं नहिं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नाहिं जानूं।
मैं फ़कीर का नाम दिवाना, सब से बढ़ कर मानूं॥

राम का अवतार हुआ तो शंकर ने उन्हें प्रणाम किया, कृष्ण ने अवतरित होकर भक्ति पूजा चलाई। कृष्ण की भक्ति वास्तव में परा-भक्ति की पहली सीढ़ी है। भगवद्-गीता में सन्तमत के ही १८ सत्संग हैं। कृष्ण-अर्जुन संवाद सन्तमत के सत्संग का प्राचीनतम नमूना है। दाता दयाल जी ने कृष्ण की निन्दा नहीं की, बल्कि उन्हें परमतत्त्व का

अवतार कहा है जो नहीं समझे, वे ऊन्हें काल का अवतार कहते हैं किन्तु काल भी तो दयाल से ही निकला है। काल के नियमों को न अपनाने से जीव संसार में जीवित ही नहीं रह सकता, सन्तमत की शिक्षा का पालन भी नहीं कर सकता। कबीर साहिब ने कहीं कोई विरोध नहीं किया है। उन्होंने बड़े प्रेम से काल की चादर ओढ़ी और ज्यों की त्यों उतार कर रख दी। सन्तों ने काल के देश में आकर काल के नियमों का बड़े प्रेम से पालन किया और जब अपना मिशन पूरा हो गया तो खुशी से शरीर को त्याग दिया। दाता दयाल जी ने चेतावनी देते हुए कहा :—

'दरपेश सब के वास्ते मंज़िल अजीब है।
ग़ाफ़िल बहोश बाश अजल अनकरीब है।'

यह चेतावनी सब के वास्ते है। ऐ सोने वाले होश में आओ! मौत नज़दीक खड़ी है। गीता के ११वें अध्याय के आगे पुरुषोत्तम योग में भगवान् कृष्ण ने बताया कि मैं काल भी नहीं, काल से परे हूँ। जहाँ सूर्य-चन्द्र नहीं हैं, वह मेरा परम धाम है। जहाँ जा कर जीव वापस नहीं आता, वह मेरा परम धाम है। कैसे कोई कह सकता है कि कृष्ण केवल काल थे? 'वाणीजालम् महाजालम्।' राम के युग में राम की ज़रूरत थी, आज नहीं है। हाँ, यह अवश्य है कि राम के चरित्र से आज भी हम प्रेरणा ले सकते हैं। ईश्वर ऐश्वर्य वाला है और ब्रह्म प्रकाश है लेकिन परमतत्त्व तो इन सब से परे है। प्रकाश और शब्द से भी आगे है। इसीलिये यह सब लक्ष्य नहीं है, यह साधन-मार्ग है। मंज़िल तो इससे आगे है जहाँ यह सब कुछ भी नहीं है। परमदयाल जी महाराज ने बड़े सरल, मार्मिक और प्रभावशाली शब्दों में अध्यात्म के इतिहास में प्रथम बार मंज़िल का पता दिया है। वे कहते हैं, "जब मैं प्रकाश, शब्द में चला जाता हूँ, तो

सोचता हूँ कि इससे आगे क्या है ? प्रकाश को देखने और शब्द को सुनने वाला कौन है ? और जब मैं शब्द से भी ऊपर जाता हूँ तो मुझे वहाँ यह होश नहीं रहता कि मैं हूँ और यह भी होश नहीं रहता कि मैं नहीं हूँ।" ऐसी अवस्था का इनसे पहले किसी ने बयान नहीं किया है। इसीलिये दाता दयाल जी ने कह दिया :—

'मैं तो नाम फकीर दिवाना, सब से बढ़ कर मानूं।'

यह आप सब के लिये बड़े सौभाग्य और गौरव की बात है कि परमतत्त्व के सबसे महान् अवतार के पास आप रहे, आपको भूल कर भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए :—

'मेरे साधु हैं शब्द विवेकी, सन्त वंश कुल शोभा।
चरन कमल मस्तक पर धारूँ, प्रेम मगन मन छोभा॥'

परम दयाल जी की महिमा यह है कि वे शब्द-विवेकी थे और शब्द से भी ऊँचे चले गये थे। क्योंकि शब्द मे भी ठहर जाने से शब्द के प्रति मोह हो जायेगा। इसलिये उन्होंने प्रेम की शिक्षा दी, प्रेम का व्यवहार किया और दाता दयाल ने कहा कि प्रेम से बढ़कर और कोई चीज़ नहीं है :—

'एक घड़ी साधु की संगत, कटे मोह यम फाँसी।
मेरी नज़र में साधु फकीरा, सत चित आनन्द रासी॥'

महाराज जी जैसे फकीर की संगत एक घड़ी क्या, आधी से आधी घड़ी काफ़ी है। कबीर साहिब फरमाते हैं :—

'एक घड़ी, आधी घड़ी, आधी में पुनि आध।
कबीर संगत साधु की, कटें कोटि अपराध॥'

फकीर के तो एक वाक्य और एक शब्द से भी अभय-दान मिल जाता है, मिला है। सत्तगुरु के सत्संग में बैठने से क्या मिलता है ? सत्तगुरु के शरीर से, वाणी से जो धार (Radiation) निकलती है, वह आप पर अपना प्रभाव करती है। और अगर आप उसे ग्रहण करने को पहले से

तैयार बैठे हैं तो उनके एक शब्द से आप को उद्‌बोधन हो जायेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं :—

'जो फकीर का दर्शन पाऊँ, चरन सरोज पखारूँ।
आज तरूँ उनकी शरनाई, औरों को भी तारूँ।"

ऐसे परम फकीर के चरण-सरोज में आकर पिछली सारी बातों को त्याग कर शरणागत हो रहना है। शरणागत हो जाने से तुम्हें अपने जैसा ही बना देते हैं और ऐसा बना देते हैं कि आप भी तरो और साथ ही औरों को भी तार जाओगे :—

'साधू की संगत गुरु की सेवा, सहजहि काम बनावें।
जिस पर साध की दृष्टि पड़ गई, फिर जग जोनि न आवे॥'

सत्तगुरु सैन-बैन से अकह को भी कह जाता है और अलख को भी लखा देता है। वह प्रेम-भक्ति की धारा बहा देता है और जो उसमें डुबकी लगाता है, उसे फिर वापस आने की जरूरत नहीं होती :—

'तरुवर सरवर मेघ का पानी, औरन को सुखकारी।
तैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधू परउपकारी॥'

वृक्ष की छाया पंथाइयों के लिये होती है और तालाब तथा वर्षा का पानी प्यासों के लिये होता है। ऐसे ही साधु और फकीर अपने लिये नहीं बल्कि औरों के कल्याण के लिये अवतरित होते हैं। राम के पुरुषा रघु ने जब विश्वजित यज्ञ किया तो अपनी सारी सम्पदा बाँट दी। देना जरूरी है। जो देता है उसे मिलता है; जो देता नहीं, उसे मिलता भी नहीं :—

'तू फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूँ फकीर चरन लग, ऐ फकीर सुखदाई॥'

दाता दयाल उन्हें उद्‌बोधन दे रहे हैं कि ऐ फकीर तू मेरा मिशन आगे चला। काम तो मालिक का है।

दाता दयाल जी का काम पूरा हो गया, उन्होंने परमदयाल जी को सुपुर्द कर दिया ताकि जगत्-कल्याण का काम आगे चलता रहे :—

'सुन ले कथा सुनाऊँ तुझ को, प्रगटे विमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग माहीं, पर फकीर कोई एका॥'

संसार में जीव तो असंख्य होते हैं, पर फकीर अपने समय का एक ही होता है। दाता दयाल जी ३ कथाओं के द्वारा परमदयाल जी महाराज को उनके भूत और भविष्य का उद्बोधन कराते हैं और बताते हैं कि पहले भी तुम गुरु हरगोबिन्द के रूप में अवतार ले चुके हो और जहाँगीर के क़ैदखाने में बन्द होकर सात हज़ार क़ैदियों को बन्धन से छुड़ाया :—

'तीन ताप से जीव दुःखी हैं, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥'

परमदयाल जी महाराज की दया का काम आज भी मानवता मन्दिर में और सब जगह चल रहा है। उन्हीं की कृपा से आज आप लोगों को बुलाया ताकि उनके वचनों को सुन कर उस पर अमल करें और अपना जीवन सफल करें।

सब को राधास्वामी!

आम तौर पर बड़ी-२ किताबों के पढ़ने से इस क़दर फायदा नहीं होता जिस क़दर ग़ौर से छोटे-२ नुक्तों को पढ़ने से होता है। सोचो, समझो और ग़ौर करो कि मैं सच कह रहा हूँ या झठ। छोटे-२ नुक्तों पर ग़ौर करने की आदत डालो और तुम्हारी ज़िन्दगी देखते-२ ही तबदील हो जायेगी।

—दाता दयाल

सत्संग परमसन्त मानव दयाल
डा: ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज
आन्ध्रप्रदेश 29-1-85

पाके नर जीवन न समझा, तत्त्व को और सार को।
क्यों बुरा कहते हो तुम, ईश्वर को और संसार को॥
बुद्धि उसने दी तुम्हें, बुद्धि की शक्ति युक्ति दी।
क्यों बिगाड़ा पाके सब, परमार्थ और व्योहार को॥
देवताओं से भी उत्तम, उसने तुमको कर दिया।
भरम में फँसकर न समझा, तुमने वार और पार को॥
कर लो सतसंगत गुरु की, ज्ञान की दृष्टि खुले।
लाओ तट पर नाव अपनी, छोड़कर मँझधार को॥
राधास्वामी की दया से, जनम को कर लो सुफल।
काटो बन्धन भरम के, और त्यागो कारागार को॥
ओंकार बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
मोक्षदं कामदं चैव ओंकाराय नमो नमः॥
ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चिज् जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम्।
राधास्वामी!

परम आदरणीय आनन्द राव जी महाराज, मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप सत्संगी भाई और बहनो, अभी महाराज जी ने हमारे जीवन के लक्ष्य के बारे में उदाहरण

बताया कि ज्ञान मनुष्य के अन्दर सबसे ऊँची वस्तु है। मानव तभी मानव है जब वह विवेक से, ज्ञान से और समझ से काम लेता है। मैंने आपके सामने जो मंगलाचरण रखा है वह हमारे ऋषियों ने अनुभव के आधार पर जो ईश्वर और मनुष्य के बारे में समझा उसका निचोड़ है, सार है। ॐ शब्द व्यापक शब्द है। सभी धर्म हिन्दु धर्म, सनातन धर्म, आर्य समाज, बौद्ध धर्म, जैन धर्म आदि ॐ का सहारा लेकर चलते हैं। यहाँ तक कि सिक्ख धर्म भी ओंकार से चलता है। यही ओंकार शब्द प्रकाश है। यह ओंकार एक है। 'निर्भय निर्भओ, निरहंकार। मालिक में अहंकार नहीं है, भय नहीं है, डर नहीं है और वास्तव में वह न पैदा होता है न मरता है। इतना अच्छा ऋषियों का दर्शन है। ओंकार शब्द को भारत के सभी धर्म मानते हैं। ओंकार ही मालिक का नाम है। मानव खुद ओंकार स्वरूप है। ईसाई, इस्लाम तथा यहूदी धर्म भी ओंकार को मानते हैं लेकिन यह ओंकार का उच्चारण अलग करते हैं। यह सब जब प्रार्थना करते हैं तो प्रार्थना के अन्त में आमिन शब्द कहते हैं। इस तरह वह ॐ का उच्चारण आमिन करते हैं। हमारी संस्कृति इतनी वैज्ञानिक है, इतनी व्यापक है कि हम ईश्वर को दो हाथ, दो पाँव वाला मनुष्य नहीं मानते बल्कि उसे पुरुष मानते हैं। इस ओंकार को नमस्कार क्यों किया? 'ओंकारं बिन्दुसंयुक्तम्।' हमारे जीवन का लक्ष्य एक है। ओंकार के साथ जो बिन्दु लगी हुई है उसका अर्थ यह है कि हम उस ओंकार को नमस्कार करते हैं जिसमें अ उ म तीन अक्षर हैं और बिन्दु लगी है। अ उ म क्या है? जैसे महाराज जी बता रहे थे कि मनुष्य में शरीर, मन और आत्मा अर्थात् सत्, चित् और आनन्द हैं। मनुष्य ओंकार परमात्मा का स्वरूप कैसे है? परमात्मा के तीन शरीर हैं—ब्रह्मा, विष्णु

और शिव। ब्रह्मा परमात्मा का स्थल शरीर है। यह सारा जगत् जो दिखाई दे रहा है जैसे चाँद, सूर्य, नक्षत्र आदि जितने भी लोक-लोकान्तर हैं वह मालिक का, ईश्वर का, परमतत्त्व का शरीर है। ॐ हैं अकार, उकार मकार। यह शरीर पैदा किया गया है, इसकी सृष्टि की गई है, सृजन किया गया है। हमारा शरीर भी उसका मूल है।

जब जगत् को पैदा किया तो उसका पोषण करने के लिए उस परमतत्त्व ने एक और शक्ति पैदा कर दी, वो विष्णु शक्ति है। मालिक का सूक्ष्म रूप है विष्णु शक्ति या ब्रह्माण्डी मन।

जब भौतिक जगत् पैदा हो गया तो उसका नाश भी होना ज़रूरी है क्योंकि वह स्थायी नहीं है लेकिन जहाँ से वह निकला था विष्णु उसी भौतिक जगत् का फिर उठा करके शिव के अन्दर वापस ले जाता है। कारण के, प्रकाश के अन्दर ले जाता है। कहा जाता है कि शिव जी मोक्ष देने वाले हैं। त्रिगुणात्मक जगत् के लिए तीन अक्षर हैं और ये तीनों मनुष्य के अन्दर हैं। मनुष्य का शरीर ब्रह्मा है जो पैदा करता है। मनुष्य का मन विष्णु है जो पालन करता है। मनुष्य की आत्मा शिव-आनन्द है। इस प्रकार सत्, चित् आनन्द अपने ही अन्दर हैं।

एक आदमी बहुत ग़रीब था। वह अपने घर के बाहर गली में कुछ ढूंढ़ रहा था। किसी व्यक्ति ने पूछा कि तेरा क्या खो गया है जिसे तू ढूंढ़ रहा है? उसने कहा कि मेरा एक रुपया खो गया है। उस व्यक्ति ने पूछा कि कहाँ खोया था? कहने लगा कि घर में खोया था। वह व्यक्ति कहने लगा कि रुपया तो तेरा घर में खोया है मगर तू बाहर क्यों ढूंढ़ रहा है? कहने लगा कि मेरे घर के अन्दर अंधेरा है, बत्ती नहीं है, गली में बत्ती जल रही है इसलिए बाहर

देख रहा हूँ।

इस प्रकार सत्, चित्, आनन्द तीनों आपके अन्दर हैं। यदि हम अपने जीवन के उद्देश्य को समझकर अपने शरीर को कैसे बनायें, अपने मन को किस तरफ लगायें और अपनी आत्मा का अनुभव किस तरह करें, जब यह पता लग जायेगा तो उस परमतत्त्व का अनुभव अपने ही अन्दर हो जायेगा :—

'ढूंढ़ मुझको अपने मन में मैं तो तेरे पास हूँ।'

मालिक तो कह रहा है कि मैं तेरे अन्दर हूँ, मैं अन्तर्यामी हूँ लेकिन तुम मुझे बाहर ढूंढ़ रहे हो।

एक अमीर आदमी की लड़की थी। उसका एक बहुत कीमती हीरे-जवाहरात का हार था। वह उस हार को कभी-२ पहना करती थी। उसने अपने जन्मदिन की पार्टी में शाम को अपनी सहेलियों को बुलाया। शाम को वह अपने कमरे में गई और उसने करोड़ों रुपये की कीमत का हार निकाल कर गले में डाला ही था कि उसकी दो सहेलियाँ आ गईं। उनके साथ वह बातों में लग गई और यह भूल गई कि हार उसके गले में है। जब उसे हार का ध्यान आया तब वह उठकर भागी और उसने सारा घर देख लिया, शोर मचा दिया कि मेरा हार खो गया है। उसकी दोनों सहेलियों ने पूछा कि तेरा क्या खो गया? उसने कहा कि मेरा हार खो गया है। उन्होंने कहा कि हार तो तेरे गले में पड़ा है। जैसे ही उसने हार अपने गले में देखा उसे आनन्द आ गया तब उसने अपना जन्मदिन मनाया। तो यही बात है कि मालिक सत्, चित्, आनन्द आपके अन्दर मौजूद है और आप उसे चारों तरफ ढूंढ़ रहे हैं। आप पंडितों से मौलवियों से पुजारियों से गुरुओं से पूछ रहे हैं कि हमारा हार कहाँ खो गया है किन्तु वे सब आपका

इसलिए मार्ग दर्शन नहीं कर सकते क्योंकि वह स्वयं भी नहीं जानते कि उनके गले का हार कहाँ है? ज्ञान आपके अन्दर मौजूद है।

सत्, चित्, आनन्द जहाँ से निकले हैं वह तो परम-तत्त्व है, वो बिन्दु है।

ओंकारं बिन्दुसंयुक्तम्.....

योगी कौन है? जो अपने आपको स्वयं के अन्दर बैठे हुए परमतत्त्व से मिला दे वह योगी है। कई योगी होते हैं जो राजयोग करते हैं, हठयोग करते हैं। घर के अन्दर पत्नी अपने पति की, बच्चों की सेवा कर रही है वह भी योग कर रही है। वह किसी योगी से कम नहीं है।

एक योगी बारह वर्ष तक तपस्या करता रहा। जिस पेड़ के नीचे वह बैठा था उस पेड़ पर एक बगुली बैठी थी। उस बगुली ने बीठ कर दी वह बीठ योगी पर गिरी। योगी को जैसे ही गरम लगा उसने आक्रोश से बगुली को देखा। योगी के देखते ही बगुली जल कर राख हो गई और नीचे गिर पड़ी। अब उसे यह अहंकार हो गया कि "मैं तो बहुत बड़ा योगी हूँ"। अब वह योगी उठा और शहर की तरफ गया। शहर में जाकर वह एक मकान के सामने खड़ा हो गया। उस मकान में एक पतिव्रता औरत और उसके बच्चे तथा पति रहते थे, पति बीमार था उसने पानी मांगा। जब तक वह पतिव्रता पानी लेकर आई पति को नींद आ गई और वह सो गया। पतिव्रता पानी लिए खड़ी थी। योगी ने कहा कि अलख निरंजन, भिक्षा दे माई। उस पतिव्रता ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका एक साल का बच्चा अग्नि के पास खेल रहा था मगर उसको उसका भी ध्यान नहीं था। बच्चा अग्नि में गिर पड़ा लेकिन अग्नि ठण्डी हो गई। योगी यह सब देख रहा था। थोड़ी देर में

उसका पति जगा तब उसने उसको पानी पिलाया। अब पतिव्रता उस योगी की तरफ आई। योगी ने बड़े आक्रोश से पतिव्रता की तरफ देखा। पतिव्रता ने कहा कि योगी महाराज, मैं कोई बगुली नहीं हूँ जो जल कर राख हो जाऊंगी। योगी ने चौंक कर पूछा "माता, आपको यह सब कैसे पता लगा"? पतिव्रता ने कहा "योगी महाराज मालिक तक पहुँचने के लिए जंगल में जाना जरूरी नहीं है। मैंने अपने गृहस्थ में रहकर अपने पति की सेवा करके वह ज्ञान प्राप्त कर लिया जिसे तुमने जंगल में १२ साल रह कर प्राप्त किया। अगर तू इससे ज्यादा जानना चाहता है तो फलाने गाँव में धर्म व्याध नाम का एक कसाई रहता है उसके पास चला जा।" जब योगी उस कसाई के पास पहुँचा तो कसाई ने कहा "अच्छा-२, योगी महोदय तुम्हें उस पतिव्रता औरत ने भेजा है"। योगी हैरान हो गया कि इस कसाई को कैसे ज्ञान हो गया। कसाई ने कहा "मैं तुम्हें बताता हूँ कि मुझे कैसे ज्ञान हो गया।" कसाई योगी को घर ले गया। घर में कसाई के वृद्ध माता-पिता थे। कसाई उनकी सेवा करता था और उनको भगवान् मानता था। उसने कहा "इनकी सेवा से मैं मोक्ष को प्राप्त हो जाऊंगा"।

तो क्या है? ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः। सभी ऋषि, मुनि उस ओंकार का ध्यान करते हैं। ओंकार लोक भी देगा और परलोक भी देगा लेकिन उससे पहले ध्यान है। राधा लोक है स्वामी परलोक है। राधास्वामी किसी व्यक्ति का या फिरके का नाम नहीं है। राधा आत्मा है स्वामी परमात्मा है, परमतत्त्व है।

राधास्वामी हालत आपके अन्दर मौजूद है। क्या जीवन का लक्ष्य शरीर, मन, आत्मा हैं? शरीर सेवा के लिए होता है। बूढ़े मनुष्य मालिक का रूप हैं उनकी सेवा करो। मगर

आप सारी दुनिया की तो सेवा नहीं कर सकते इसलिए आप अपने घर में माता-पिता, भाई-बहनों आदि की सेवा करो मैं अपने जीवन की मिसाल देता हूँ। बचपन में मेरे माता-पिता के पास बहुत पैसा था। मुझे हर प्रकार का आराम था। लेकिन पिता जी के गिरने के कारण चोट आ गई और उनकी स्मृति चली गई। बारह साल की छोटी उम्र में घर का सारा बोझ मेरे ऊपर आ गया। वह भी समय था जब रात को खाने के लिए मेरे पास रोटी नहीं होती थी। मेरी माता दो वर्ष बीमार रही मैंने उनकी लगातार सेवा की। उन्हीं के आशीर्वाद से मैं पढ़ा, प्रोफेसर बना, ख्याति मिली, अमेरिका गया। मैं आपको बता रहा हूँ कि यदि आप अपने माता-पिता की सेवा करोगे तो एक दिन बहुत बड़े आदमी बनोगे। यह शिक्षा बच्चों के लिए है। माताएँ अपने गृहस्थ के अन्दर अपने पति को ईश्वर रूप मान कर चलें तो उनको कोई कष्ट नहीं होगा। आपको शरीर इसलिए मिला है कि आप इस शरीर से किसी की सेवा करो, मदद करो। मन इसलिए मिला है कि उससे आप मालिक से प्यार करो। एक बात आपको बताता हूँ कि एक बार भगवान् राम ने हनुमान से पूछा कि हनुमान तू बता कि तेरा, मेरा क्या सम्बन्ध है ? हनुमान ने कहा, महाराज शरीर से मैं आपका दास हूँ शरीर आपकी सेवा में रहेगा, जीव की दृष्टि से मैं कहाँ से आया हूँ, मैं आपका अंश हूँ और आत्मा की दृष्टि से मैं हूँ ही नहीं तुम ही हो, मैं शरणागत हूँ। मानव को पूर्णता प्राप्त करने के लिए शरीर, मन और आत्मा तीनों के स्वभाव के मुताबिक व्यवहार करना चाहिए। शरीर भौतिक है और भौतिक जगत् में या मादा में हमेशा गति या चाल रहती है इसलिए शरीर को साधना है तो अपने आपको सेवा के कर्म में लगा

दो। यदि हमारा कर्म दूसरे की भलाई के लिए होगा और उसमें हमारा स्वार्थ किसी दूसरे को हानि पहुँचाने के लिए नहीं होगा तो वो कर्म निष्काम हो जाने की वजह से हमें बाँधेगा नहीं। इसलिए सन्तमत में निष्काम कर्म करने की सम्मति दी गई है। मन या चित्त का स्वभाव सोचना, विचार करना है। जिस प्रकार सेवा करने से शरीर शुद्ध होता है उसी प्रकार शुभ संकल्प से मन या चित्त शुद्ध होता है। मन का सम्बन्ध हमारे भावों से है। यदि हम सद्भावना से अपने को प्रेममय बना कर किसी के प्रति दुर्भावना रखें तो हमारा मन पवित्र हो जाने के कारण न तो स्वयं दुःखी होगा न दूसरों के दुःख का कारण बनेगा। भक्तिमार्ग के द्वारा मन इतना शुद्ध हो जाता है कि वह हर वस्तु में मालिक को देखता है। यह दृष्टि भक्त को प्राप्त होती है इसी को समदृष्टि भी कहा गया है।

स्वामी रामतीर्थ ने अपने अनुभव के आधार पर इस अवस्था को प्राप्त करने के बाद लिखा :-

"जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है
कि हर शै में जलवा तेरा हू बहू है।"

मैंने इसी विचार को और इसी पद्य को पढ़ने और समझने के बाद अपने अनुभव के बाद यह लिखा था—

"वही नर जहाँ में सुखी है निरन्तर।
कि दिन रात जिसको तेरी जुस्तजू है॥
तू है सबका स्वामी तू है सब का दाता।
जो हो जाये तेरा उसी का ही तू है॥
जो सबको तुम्हीं में तुम्हें सब में देखे।
वो आशिक है तेरा और माशूक तू है॥"

पहले पद्य का मतलब साफ है। संसार में जो व्यक्ति लगातार मालिक से प्रेम करता है और उसी की तलाश कर

रहा है तो वह कभी दुःखी नहीं हो सकता। वह हर अवस्था में हर समय और हर घटना में ईश्वर की इच्छा को ही स्वीकार करेगा और मौजेमालिक पर रहेगा। वह दुःख में दुःखी नहीं होगा और सुख में जरूरत से ज्यादा प्रसन्न नहीं होगा। दाता दयाल जी महाराज ने इसी भावना को व्यक्त करते हुए लिखा है :—

"हर शै में कारसाज उसी एक खुदा को देख।
शैतां भी पास आये तो उसमें खुदा को देख॥"

इसी प्रकार दूसरे पद्य में ये स्पष्ट किया गया है कि मालिक ही एक मात्र स्वामी है और आत्मा राधा है। जब आत्मा अपने आपको पूर्णतया मालिक के सुपुर्द कर देता है तो मालिक खुद आत्मा का मार्गदर्शन करता है। तीसरे पद्य में यह बताया गया है कि परमतत्त्व आधार का अंश सब जगह है और सब व्यक्तियों में है यही राधास्वामी हालत है। जब साधक द्वैत भक्ति से ऊपर उठकर पराभक्ति की हालत पर पहुँच जाता है, उसको सब जगह परमतत्त्व ही दिखाई देता है। इस अवस्था को पाकर ही साधक सच्चा भक्त बन जाता है।

आत्मा का स्वभाव आनन्द है और आत्मा प्रकाशमय कारण शरीर है इसलिए आत्मा की खुराक अन्तर्दृष्टि है। सुमिरन, ध्यान, भजन में तीसरे नेत्र पर ध्यान लगाने का और अन्दर में प्रकाश अनुभव करने का विधान इसीलिए है। संक्षेप में शरीर, मन और आत्मा को निष्काम कर्म, भक्ति और ध्यान में लगाने से मनुष्य का सत्, चित् और आनन्द सच्चिदानन्द में बदल जाता है।

सभी को राधास्वामी !

———

मासिक सन्देश

परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो,

राधास्वामी, परमदयाल जी सहाई !

मैंने पिछले मासिक सन्देश में वचन दिया था कि इस बार आपको विदेशी दौरे का पूरा-पूरा हाल बताऊंगा। अब आप उसे विस्तार पूर्वक पढ़िये। मैं फिर भी यह विवरण संक्षेप में इसलिए दे रहा हूँ क्योंकि इस दौरे का पूरा विवरण लिखने के लिए सैकड़ों पृष्ठों की एक पुस्तक लिखी जानी चाहिए। मैं अधिक से अधिक जितना ही अपने सद्गुरु के द्वारा दी गई आज्ञा का पालन करते हुए विश्व भर में अपना कर्त्तव्य निभा रहा हूँ, मुझे उतना ही अधिकाधिक जन-साधारण का सहयोग मिलता जा रहा है। मैं हर जगह पर सत्संगियों के प्रेम, श्रद्धा और आदर-सत्कार को देख कर अपने आपको धन्य समझता हूँ क्योंकि सर्वत्र सत्संगियों की संख्या और उनकी भक्ति ज़्यादा से ज़्यादा बढ़ती चली जा रही है। विश्व में हर स्थान पर एक बात देखने में आती है और वह यह कि सभी लोग सत्सगों को सुनकर मुक्त कण्ठ से यही कहते हैं कि यह सत्संग उन्हें परमदयाल जी की याद दिलाते हैं और इनको सुनने से वे परमदयाल जी

के उपदेशों को पहले से अधिक समझ रहे हैं और उन पर सच्चे दिल से पहले से भी अधिक अमल कर रहे हैं।

सत्संगियों की एक और प्रतिक्रिया यह है कि मेरे इस कर्त्तव्य को निभाने के फलस्वरूप बहुत नये जिज्ञासु मानवता धर्म और राधास्वामी मत को अपना रहे हैं और ऐसे नये सत्संगियों में अधिक से अधिक संख्या ऐसे लोगों की है जो विद्वान् हैं, अच्छे पदों पर हैं और जिनका समझने का स्तर बहुत ऊँचा है। इसका कारण यह है कि वह सच्चाई जो परमदयाल जी ने बयान की और जो उन्होंने अपने जीवन में अपनाई, वह ऐसी व्यापक सच्चाई है जिसे हर एक आदमी अपने जीवन में लागू कर सकता है और उससे लाभ उठा सकता है। मेरा दृष्टकोण भी परमदयाल जी महाराज की तरह वैज्ञानिक है और अन्धविश्वास पर आधारित नहीं है। यह बात मैंने कई बार सत्संगों और मासिक सन्देशों में पहले भी कही है। मैं हर एक धर्म, आध्यात्मिक या बौद्धिक संस्था के निमन्त्रण को स्वीकार करता हूँ और उनके तथा उनके अनुयायियों के साथ अपने आध्यात्मिक अनुभव को बाँटता हूँ।

वह आध्यात्मिक मानववाद जो हमारे इस अनुभव में निहित है ऐसा मानववाद है जो सभी धर्मों और दर्शनों में गुप्त रूप से मौजूद है। इसलिए मैं मानवमात्र के सभी सम्प्रदायों और संस्थाओं को सहज रूप से इस मानववाद को बताने की कोशिश करता हूँ। अतः इससे पहले कि मैं विदेशी दौरे पर विश्व धर्म सम्मेलन के बारे में आपको कुछ बताऊँ, यह कहना चाहता हूँ कि अमेरिका जाते हुए मैंने ५ नवम्बर को इंग्लैंड में लंकास्टर विश्वविद्यालय के धर्म-शास्त्र विभाग के उस निमन्त्रण को स्वीकार कर लिया था जिसके अनुसार मुझे वहाँ पर प्रवचन देना था। धर्मशास्त्र

के विभाग के अध्यक्ष ने मेरे प्रवचन का जो विषय चुना था वह "भारतीय दर्शन का वर्तमान में महत्त्व" था।

हम ४ नवम्बर को प्रातःकाल १० बजे एयर इंडिया वायुयान से लंदन के हवाई अड्डे पर पहुँचे। परमदयाल जी महाराज के भतीजे श्री रवि शर्मा हमारे स्वागत के लिए वहाँ पहले से ही मौजूद थे। हमारे पहुँचने के तुरत बाद बरमिंघम नगर के निवासी श्री किशोर गुप्त तथा उनकी छोटी बेटी भी वहाँ पहुंच गये। यहाँ पर मैं यह बता देना चाहता हूँ कि श्री रवि शर्मा जो परमदयाल जी महाराज के सन्त भाई राय साहिब सुरेन्द्र नाथ जी महाराज के सुपुत्र हैं, मुझसे बहुत प्रेम करते हैं। जब भी मैं इंगलैंड जाता हूँ प्रिय रवि अपने व्यापार में अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी मुझे हवाई अड्डे पर मिलने के लिए आते हैं। कई बार उन्होंने अपने खर्च पर लंदन में हमारे ठहरने का प्रबन्ध भी किया है। उनका ऐसा करना अपने आप पर ज़रूरत से अधिक भार डालना है, और मैं महसूस करता हूं कि उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए क्योंकि मैं उनसे आयु में बड़ा हूँ किन्तु उनका प्रेम इतना अगाध है और उनका चेहरा ऐसा मासूम है कि मैं उनकी सेवा को अस्वीकार करके उनके दिल को दुखाना नहीं चाहता। इस मासिक सन्देश के द्वारा मैं रवि शर्मा और उनके परिवार को प्यार और आशीर्वाद देना चाहता हूं।

रवि शर्मा मेरी सेवा करके और मुझे आराम देकर परोक्ष रूप से उन सत्संगियों की सेवा कर रहे हैं जिनकी खातिर मैं इंगलैंड जाता हूँ और जो हमेशा सुरेन्द्र नाथ जी और परमदयाल जी महाराज को प्रिय रहे हैं। मैं यह सब कुछ इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि जब मैं १९८२ में रवि शर्मा को पहली बार मिला तो मुझ वह वैसे ही प्यारे सम्बन्धी

लगे जैसे कि परमदयाल जी महाराज के सुपुत्र पदम-महान् और उनका परिवार लगा। मैंने हमेशा परमदयाल जी महाराज की सपुत्री सुषमा और उनके पति श्री क्रांतिकुमार शर्मा के बारे में भी ऐसा ही महसूस किया है।

सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि परमदयाल जी महाराज के सभी निकटवर्ती सम्बन्धी, जिसमें उनकी बहू सरला-भाग्यशालिनी को माता, बहनें और भाई भी सम्मिलित हैं, ऐसा महसूस करते हैं कि मैं उनके लिए तथा उनके परिवारों के लिए परमदयाल जी का साक्षात् रूप हूँ। एक बार बहूरानो सरला ने मुझे एक पत्र में लिखा था, "हमारे पूज्य ससुर बाबा जी ने हम पर जो सबसे बड़ा एहसान किया है वह यह कि उन्होंने मानव दयाल जी को हमें दे दिया।" यहाँ पर इस परिवार के उन युवा सदस्यों के प्रेम और आदर के बारे में लिखने का स्थान नहीं है जिनमें परमदयाल जी महाराज की पोतियाँ रानो, पावन, अगम-प्रतिभाशाली और उनके पौत्र विक्रमवीर शामिल हैं। यह सभी मेरे पौत्रों के समान हैं जो मुझे फकीर बाबा की रूहानी विरासत में प्राप्त हुए हैं। मैं इसके लिए अपने परम गुरु के प्रति बहुत ही कृतज्ञ हूँ।

मैं यह सब बातें इसलिए लिख रहा हूँ क्योंकि मेरे अन्दर में कई ऐसे तत्त्व हैं जो हमेशा मुझे उन लोगों की ओर आकर्षित होने को विवश करते हैं जो फकीर बाबा को प्रिय थे और जो उन्हें सच्चे दिल से अगाध प्यार करते थे। इसी कारण ४ नवम्बर को लंदन के हवाई अड्डे पर रवि और किशोर के प्रति मेरी यही भावना उमड़ पड़ी। रवि ने तुरत इस बात को स्वीकार कर लिया कि मैं हवाई अड्डे से श्री किशोर गुप्त के साथ मैनचेस्टर को रवाना हो जाऊँ जहाँ से मुझे के० एम० खुराना, उनकी पत्नी कल्पना खुराना

के साथ ५ नवम्बर को लंकास्टर विश्वविद्यालय में भाषण देने के लिए जाना था। यहाँ पर यह बता देना ज़रूरी है कि खुराना परिवार मेरे ससुराल के नाते से सम्बन्धित थे, किन्तु अब इस परिवार के सभी सदस्य मानवता मन्दिर के सत्संगी हैं और "अन्तर्राष्ट्रीय मानव—फकीर परिवार" के सदस्य हैं। यह वैसे ही सदस्य हैं जैसे आप सब हैं।

मैनचेस्टर जाते हुए हम रास्ते में कुछ घण्टों के लिए श्री जे. सी. गुप्त के भाई किशोर गुप्त के घर ठहरे। यहाँ श्री जगदीश गुप्त का परिवार श्री बक्शी सिंह और उनकी पत्नी सावित्री, लक्ष्मी चन्द और उनकी पत्नी शशि, श्री ओम प्रकाश शर्मा और उनकी पत्नी, तथा श्री दसोंदा सिंह का परिवार मिलने के लिए मकान पर पहुँचे। यह सभी बर्मिंघम शहर के आस-पास के रहने वाले हैं। उन्होंने मेरे से यह वचन लिया कि ६ नवम्बर की रात को अमेरिका जाते हुए मैं बर्मिंघम में ज़रूर ठहरूँ। उसी रात को हम १० बजे बर्मिंघम से किशोर गुप्त की कार में बैठ कर ११-३० बजे रात मैं मैनचेस्टर पहुँचे।

६ नवम्बर को हम डा० कृष्ण मोहन खुराना की कार में श्रीमती कल्पना खुराना, कु० रीना खुराना और राजकुमार खुराना के साथ लंकास्टर के लिए रवाना हुए। हम डा० खुराना की बड़ी लड़की कु० पायल खुराना के होस्टल में करीब ४-३० बजे सायं पहुँच गये। पायल, जो लंकास्टर विश्वविद्यालय में एम० ए० की छात्रा है, धर्म-शास्त्र विभाग में भी पढ़ती है। इस विभाग के अध्यक्ष ने कु० पायल खुराना के माध्यम से मुझे भाषण देने के लिए निमन्त्रण भेजा था। इस सम्बन्ध में अधिक व्याख्या आवश्यक नहीं है। यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि जब से मैंने अमेरिका के विश्वविद्यालय से त्यागपत्र देकर अपने परम गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए मानवता मन्दिर का काम

सम्भाला है, उसी समय से खुराना परिवार ने अपना पुराना सम्बन्ध वाला दृष्टिकोण छोड़ कर मानवता मन्दिर के सच्चे सत्संगी होने का व्यवहार अपनाया है और आर्थिक दृष्टि से भी मानवता मन्दिर की सेवा करता रहता है।

यद्यपि कु० कल्पना खुराना का जन्म और पालन-पोषण विदेश में हुआ है, और उसने आरम्भ से विदेश में शिक्षा प्राप्त की है, फिर भी यह बच्ची पूर्णरूप से शाकाहारी है और सुरत-शब्द योग का अभ्यास करती है। यही हाल उसकी छोटी बहन लीना खुराना का है जो इतनी प्रतिभा-शालिनी है कि ५ वर्ष की आयु से ही अंग्रेजी में कविता लिखना आरम्भ कर दिया था और जो अपने छोटे भाई राजकुमार खुराना क तरह सुरत-शब्द योग का अभ्यास करती है। यह परमदयाल जो महाराज की अत्यन्त कृपा है कि सन्तों के मार्ग का और सुरत-शब्द योग का अधिकाधिक प्रचार हो रहा है। मेरे मित्र तथा सम्बन्धी, चाहे वे अतीत में मेरे विश्वविद्यालयों के सहयोगी भी रहे हैं, इस मार्ग को अपना रहे हैं। इनमें बहुत से प्रोफेसर, सरकारी अफसर और हजारों ऐसे छात्र भी शामिल हैं जो विश्व भर में फैले हुए हैं। इन सभी का सम्बन्ध अब गुरु-शिष्य का सम्बन्ध हो गया है।

ये सभी घटनाएँ उन सभी भविष्यवाणियों का प्रमाण हैं जो फकीर बाबा ने १९६८ से लेकर १९८१ तक मुझे अपने मित्रों और सत्संगों के द्वारा व्यक्त की थीं। मैं जब भी, जहाँ कहीं भी जाता हूँ और सत्संगियों से सम्पर्क करके उनकी प्रतिक्रिया स्वरूप अगाध प्रेम पाता हूँ। सत्संग देते समय मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं अपना कर्त्तव्य निभा कर अपने मालिक का ऋण चुका रहा हूँ। केवल इतना ही नहीं, मेरे जीवन का सारा व्यवहार और दिनचर्या प्रातः-

काल नहाने आदि से लेकर रात को बिस्तर में सोने तक मेरे लिए सद्गुरु का सत्संग हो गया है। इस प्रकार मैं अधिक समय सहज-समाधि की अवस्था में रहता हूँ। यही कारण था कि परमदयाल जी महाराज ने मुझे सत्संगियों की सेवा करने की जिम्मेदारी सौंपी थी।

लंकास्टर विश्वविद्यालय में मेरा प्रवचन प्रभावशाली रहा। प्रोफेसरों और छात्रों ने भारतीय दर्शन की नई व्याख्या को बहुत पसन्द किया और उन्होंने आग्रह किया कि मैं जब कभी इंगलैंड आऊँ तो उनके विश्वविद्यालय में अवश्य प्रवचन दूं। प्रोफेसरों को विशेषकर मेरा प्रवचन बहुत ही अच्छा लगा और वह मेरे उस विश्वविद्यालय में भाषण देने के लिए आने पर बहुत ही प्रसन्न हुए। उस विभाग का अध्यक्ष मेरा परिचय देते समय मेरी "भारतीय आचार दर्शन" की वह पुस्तक साथ लाया जो १९६५ में इंगलैंड में वहाँ के विख्यात प्रकाशक 'जार्ज एलन एण्ड अनविन लिमिटेड लंदन' ने प्रकाशित की थी। इस पुस्तक को लंकास्टर विश्वविद्यालय का धर्मशास्त्र विभाग काफी अर्से से पाठ्यक्रम-पुस्तक के रूप में प्रयोग कर रहा था, इसलिए विभागाध्यक्ष ने वह पुस्तक श्रोताओं के सामने प्रस्तुत करते हुए परिहास की मुद्रा में कहा, "डा० शर्मा की इस पुस्तक को देखिये। हमने इसे इतना उपयोग किया है कि इसकी जिल्द फट गई है।" मेरे लिए सबसे ज्यादा सन्तोषप्रद बात यह थी कि श्रोताओं ने मेरे विचारों को बहुत ध्यान से सुना और उन्होंने अपनी शंकाओं का निवारण करने के लिए काफी प्रश्न किये और उनके उत्तर प्राप्त होने पर उन्हें सन्तोष हुआ। दूसरे शब्दों में यह दार्शनिक प्रवचन मेरे जीवन की सभी दूसरी क्रियाओं की तरह लंकास्टर विश्व-विद्यालय में एक सत्संग ही प्रमाणित हुआ।

हम उसी रात को मैनचेस्टर वापिस आ गये और रात को खुराना परिवार के निवास पर ठहरे। दूसरे दिन दोपहर को हम मैनचेस्टर से बस में सवार हो कर बर्मिंघम पहुँचे जहाँ पर श्री किशोर गुप्त हमें बस-अड्डे से अपने घर ले गये। सफर में मेरे लिए हर प्रकार की सवारी एक समान है। मैं जहाँ भी सत्संग के लिए जाता हूँ, मेरे लिए बस, मोटर कार, रेलगाड़ी, हवाई जहाज, रिक्शा, ताँगा या बैलगाड़ी जो कुछ भी मिल जाये ठीक होता है, क्योंकि मेरा मक़सद हर स्थान पर अपने परम गुरु की आज्ञा का पालन करना और आध्यात्मिक कर्त्तव्य का निभाना है।

मेरे सद्गुरु की कृपा से मेरा अधिकतर समय सहज-समाधि में गुजरता है। चलते-फिरते, बातें करते, जागते-सोते, खाते-पीते हर समय परमतत्त्व से तार जुड़ी रहती है। ऐसी हालत में कबीर साहिब की यह वाणी जीवन में लाग हो जाती है :—

"उट्ठे बैठे खड़े उताने, कहें कबीर हम वही ठिकाने।"

व्यावहारिक जीवन का अधिक समय इसी तरह बीत रहा है। कोई भी व्यक्ति सारा समय इसी अवस्था में नहीं रह सकता। यह प्रश्न उठ सकता है कि इस सहज अवस्था का जीवन में क्या लाभ है? वास्तव में सहज जीवन मुझे साक्षी भाव का अनुभव देता है। मैं शरीर, मन और आत्मा से सभी कृपाओं का अनुभव करता रहता हूँ जैसा कि मैं पहले किया करता था। मुझे सुख-दुःख, लाभ-हानि और कई बार क्रोध का अनुभव भी होता है लेकिन मैं बहुत जल्दी फिर ऊपर उठ जाता हूँ। इसका परिणाम यह होता है कि मैं हर एक ऐसे व्यक्ति के प्रति सच्चा प्रेम अनुभव करता हूँ जो मेरे पास आता है और इसके साथ ही सत्संग देते समय, या बातचीत करते समय मैं अपने आपको परमतत्त्व

से जुड़ा हुआ महसूस करता हूँ। इसमें कोई शक नहीं कि यह उनमुनी सहज जीवन अवस्था मेरे उस कर्त्तव्य निभाने का फल है जो मुझे परमदयाल जी महाराज ने दिया था।

कोई भी व्यक्ति जो अपने सद्गुरु से सच्चा और पवित्र प्रेम करता है, वह इस सहज जीवन को प्राप्त कर सकता है बशर्ते कि वह बिना किसी सन्देह और संकोच के अपने गुरु की आज्ञा का पालन करे। सच तो यह है कि पूरा सद्गुरु मनुष्य के चोले में परमधाम से केवल इसीलिए आता है कि वह दुःखी जीवों को इस त्रिगुणात्मक जगत् की क़ैद से छुड़ा कर निज धाम ले जाये। ऐसा करने के लिए सबसे पहले उसे स्वयं राग-द्वेष आदि से रहित हो कर परमतत्त्व में विलीन हो कर आज़ाद होना पड़ता है और साथ ही उसे सामान्य जीवन गुज़ारना पड़ता है। जब वह सत्संगियों को मार्ग दर्शन या आशीर्वाद देता है और व्यावहारिक जीवन के स्तर पर जो कुछ वह कहता है या हिदायत करता है, उसे आम आदमी समझ नहीं सकता। सद्गुरु का व्यवहार आम आदमी के व्यवहार की तरह ही लगता है, बल्कि कई बार उसका व्यवहार इतना अटपटा होता है कि सांसारिक दृष्टि से वह भद्दा लगता है, किन्तु समय गुज़रने के बाद उसका वह व्यवहार हमेशा ईश्वरीय दिखाई देता है और अन्त में सभी के लिए लाभदायक प्रमाणित होता है। इसका कारण यह है कि सद्गुरु के सभी विचार, भाव और क्रियाएँ उस अगम-धारा से प्रवाहित होती हैं जिसे परमतत्त्व या सत्पुरुष कहा जाता है, और जो हर वस्तु, हर जीव और हर प्राणी का स्रोत है तथा परम लक्ष्य भी है। इसलिए ऐसे पूरे गुरु से सम्पर्क रखना और उसके प्रति विशुद्ध-सहज प्रेम रखना सत्संगी को सहज-समाधि के उच्चतम दर्जे पर पहुँचा देता है। दाता दयाल

जी ने ठीक ही कहा है :—

"साधु की संगत गुरु की सेवा, सहज ही काम बनावे।
जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे ॥

इस प्रकार सत्संगी में एक खास चेतना आ जाती है और वह साधारण जीवन के स्तर से ऊपर उठकर एक ऐसे ऊँचे स्तर पर पहुँच जाता है जहाँ उसका दृष्टिकोण व्यापक हो जाता है। इसी अवस्था को बताते हुए दाता दयाल जी महाराज ने कहा है :—

"ऊंची दृष्टि करे जो प्राणी, सार भेद कुछ पावे।
भेद पाय शरणागत आवे, आवागमन मिटावे ॥"

इस अवस्था को प्राप्त करने से उसे आनन्द और शान्ति के जीवन का भेद मिल जाता है क्योंकि उसने पूरी तरह से अपने आपको सद्गुरु के शरणागत कर दिया होता है। इसके फलस्वरूप सद्गुरु की मौज ही सत्संगी का सहज संकल्प बन जाता है। इसी अवस्था में गुरु—शिष्य का भेद समाप्त हो जाता है। वे एक दूसरे में विलीन हो जाते हैं। यही कारण है कि द्वत की भक्ति अद्वैत की अवस्था में परिवर्तित हो कर एकत्व हो जाती है और यह एकत्व एक ऐसी समदृष्टि प्रदान करता है जिसके कारण हर जगह और हर प्राणी में गुरु की उपस्थिति का अनुभव होने लगता है। मैंने अपने सद्गुरु की आज्ञा का पालन करने में यही अनुभव किया है और मैं आप सब को यही सन्देश देता हूँ।

इसमें कोई शक नहीं कि इस दृष्टिकोण को अपनाने के लिए त्याग और कुर्बानी की ज़रूरत है जिसे तपः या तपस्या कहते हैं। सच्ची तपस्या गुरु की आज्ञा का पालन करना और गुरु-वाक्य को ही महामन्त्र मानना है।

मुझे खेद है कि स्थान की कमी के कारण इस मासिक सन्देश में तपः के विषय पर अधिक व्याख्या नहीं दे सकता।

अगले मासिक सन्देश में मैं इस कर्त्तव्य को पूरा करूंगा। इन शब्दों के साथ मैं आप सबकों नये वर्ष को शुभ कामना भेजता हूं और चाहता हूँ कि आपका जीवन आनन्दमय, पवित्र और स्वास्थ्यमय हो। आप सब को मेरा प्रेम और आशीर्वाद।

आपका फकीरमय
मानव

---

1. भाव का भूखा हूँ मैं, और भाव ही इक सार है।
भाव से मुझ को भजे, तो भव से बेड़ा पार है॥
2. भाव बिन कोई पुकारे, मैं कभी सुनता नहीं।
टेर भक्ति भाव की, करती मुझे लाचार है॥
3. भाव बिन सर्वस्व भी दे, मैं कभी लेता नहीं।
भाव से इक फूल भी दे, तो मुझे स्वीकार है॥
4. अन्न, धन और वस्त्र भूषण, कुछ न मुझ को चाहिए।
आप हो जाएँ मेरे बस, यह मेरा सत्कार है॥
5. जो मुझी में भाव रख कर, मेरी लेता है शरण।
उसके और मेरे हृदय का, एक रहता तार है॥
6. भाव जिस जन में नहीं, उसकी मुझे चिन्ता नहीं।
भाव वाले भक्त का, भरपूर मुझ पर भार है॥
7. बाँध लेते भक्त मुझ को, प्रेम की जंजीर में।
इसलिए सन्तों के द्वारा, भूमि पर अवतार है॥
8. विश्व प्रेमी भाव से, करते हैं अर्पण आप को।
जो भी कुछ उनको मिला है, प्रेम भक्ति प्यार है॥
9. भाव को हम शब्द कहते, शब्द की महिमा कठिन।
शब्द गुरु का आसरा लो, और सब बेकार है॥

संग्रह कर्त्ता :
डा० परस राम अग्रवाल

परमसन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज
का टूर प्रोग्राम

24-2-86	प्रातः सिकन्दराबाद से कटनी के लिए प्रस्थान।
24-2.86	सांयं कटनी में सत्संग।
25-2-86	लखनऊ के लिए प्रस्थान।
26-2-86	लखनऊ, 88-A, गौतम बुद्ध मार्ग। लखनऊ में सत्संग।
27-2-86	दिल्ली के लिए रवाना।
28-2-86	देहली विश्राम।
1-3-86	देहली से चण्डीगढ़ रवाना।
2-3-86	चण्डीगढ़ प्रातः 8-30 पर सत्संग। श्री त्रिलोक चन्द ठेकेदार, बंगला नं: 4, सैक्टर 19-A, चण्डीगढ़।
2-3-86	शाम को चण्डीगढ़ से होशियारपुर रवाना।
5-3-86	होशियारपुर से हरिद्वार रवाना (वाया देहली)।
6-3-86 से 9-3-86 तक	गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार में अखिल भारतीय दर्शन परिषद् की अध्यक्षता।
9-3-86	हरिद्वार से देहली रवाना। 5 बजे सायं सलवान पब्लिक स्कूल, ओल्ड राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली में सत्संग।
10-3-86	देहली से सरसोंहेरी रवाना।
10-3-86 से 11-3-86	सरसोंहेरी।

11-3-86	को सरमोहेरी से सहारनपुर दयाल टैण्ट हाऊस, कोर्ट रोड, रेलवे स्टेशन के पास सहारनपुर ।
12-3-86	को प्रातः मेरठ के लिए रवाना तथा मेरठ में सायं सत्संग । श्री जय गोपाल सेठी, 59 स्टेट बैंक कालोनी, हापुड़ रोड, मेरठ सिटी ।
13-3-86	मेरठ से बनवारीपुर ।
14-3-86	बनवारीपुर से अलीगढ़ ।
14-3-86 से	को अलीगढ़ में सत्संग C/o मेजर गोयला, इंडेन गैस एजेंसी,
15-3-86	अलीगढ़ ।
16-3-86	दयाल नगर ।
17-3-86	मथुरा, दयाल फार्म पर सत्संग ।
18-3-86	को देहली के लिए रवाना और देहली में विश्राम ।
19-3-86	होशियारपुर वापसी ।

आवश्यक सूचना

सभी सत्संगियों से अनुरोध है कि हजूर मानव दयाल महाराज को पत्र लिखते समय अपने पत्र के साथ जवाब के लिये अपना स्पष्ट पता लिखा लिफाफा आवश्यक डाक टिकटें लगा कर भेजें । इससे जवाब देने में काफ़ी सहूलियत और समय की बचत होती है ।

जो सत्संगी डाक टिकटें लगाने में असमर्थ हैं वे अपना पता स्पष्ट लिख कर अवश्य भेजें । टिकटें मन्दिर की तरफ तरफ से लगा दी जायेंगी । —प्रधान सम्पादक

महत्त्वपूर्ण सूचना

जैसा पहले भी सूचित किया जा चुका है, इस वर्ष परमसन्त हजूर परमदयाल प० फकीर चन्द जी महाराज की जन्म-जयन्ती-शताब्दी बड़े धूम-धाम से मनाई जा रही है । इस सम्बन्ध में बहुत जल्द उनकी जीवनी और शिक्षा पर एक विशाल स्मृति-ग्रन्थ प्रकाशित होने जा रहा है। इस महान् कार्य में आप सब सत्संगी भाई-बहनों के सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है।

यदि आपके पास हजूर परमदयाल जी महाराज की कोई तस्वीर (फोटोग्राफ) या विशेष पत्र हैं तो प्रकाशनार्थ जल्द से जल्द मानवता मन्दिर होशियारपुर के पते पर भेज दें। हजूर परमदयाल जी महाराज से सम्बन्धित छोटे लेख भी भेजे जा सकते हैं। यह सभी चीजें ३१ मार्च १९८६ तक अवश्य पहुँच जानी चाहियें, क्योंकि ग्रन्थ अप्रैल माह तक प्रकाशित हो रहा है।

यदि आप इस ग्रन्थ के लिये धन की मदद करना चाहें तो अपनी धन-राशि चेक, ड्राफ्ट या मनी-आर्डर द्वारा परमदयाल सेंटेनरी फंड के नाम मानवता मन्दिर, होशियारपुर के पते पर भेजें। धन-राशि की रसीद आपको भेज दी जावेगी ।

जनरल सेक्रेटरी

शोक समाचार

सभी सत्संगियों को अत्यन्त दु.ख के साथ सूचित किया जाता है कि माधोपुर (गोरखपुर) उ० प्र० निवासी डा० राजा राम सिंह, उर्फ लीहेंग चांग की धर्मपत्नी श्रीमती कैलाश कुमारी जी दिनांक 27-10-85 को अपना नश्वर शरीर त्याग कर मालिकेकुल राधास्वामी दयाल की ज्योति

में विलीन हो गईं। डा० राजा राम सिंह हज़ूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी वर्मन के ज्येष्ठ भगिनेय (नेवासे) हैं।

मानवता मन्दिर एवं मानवता परिवार के सभी सदस्य सत्संगी मालिक से प्रार्थना करते हैं कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें, तथा उनके शोकाकुल परिवार को इस असह्य दुःख के सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

जनरल सेक्रेटरी

---

1. सत्संग करते-२ बरसों गुज़र गये दिल की हालत नहीं बदली। तेली के कोहल का बैल घर में पचास कोस का चक्कर लगा कर भी जहाँ का तहाँ ही रहा। यह दिल का हाल है। जो अपने दिल के कहने में लगा वो बुरी तरह से मारा गया और जिसने गुरु के कहने का ख़्याल किया सिर्फ़ वो ज़िन्दा बचा।

2. गुरु दस-बीस बात नहीं कहता—उसने कहा तीर-घाट चलो तीर-घाट के मायने हैं जिस तरह सनसनाता हुआ तीर सीधे एक रुख होकर निशाने पर जाता है इसी तरह आपने एक रुख, एक दिल और एक चित्त बनना है। मन कहता है मेरघाट चलो इस मेरघाट में मेरा और पराया है जो इनके दांव में है उसकी रिहाई मुश्किल है। अगर आजाद होना है तो गुरु के सिर्फ़ एक बचन में मुक्ति है और अगर बन्धन में फँसना है तो मन के लिए लाखों और करोड़ों उलझनें हैं।

3. संसार और कुछ नहीं है सिर्फ़ मेरा और तेरा अपना संसार है। मुक्ति और कुछ नहीं है मेरेपने और तेरेपने को मिटा देने का नाम मुक्ति है।

—दाता दयाल

प्रार्थना

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
अलख अगम और अनामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
परम, सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया।
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये धुर पद धामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
बन कर आये परम फ़कीर, हरने सब जीवों की पीर।
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
राम भी हो और कृष्ण भी तुम।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार।
ऐसे गुरु को बारम्बार, नमामि नमामि नमामि।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
दाता दयाल के प्यारे तुम मानव के रखवारे तुम।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।

महत्त्वपूर्ण सूचना

हजूर मानव दयाल जी महाराज 28 फरवरी 1986 को 5 बजे सायं दिल्ली में मास्टर राम सिंह जी शर्मा के निवास स्थान मकान नं० 30, रामेश्वर नगर डाकघर न्यू सब्जी मंडी, दिल्ली में सत्संग फरमावें गे।

जनरल सेक्रेटरी

Regd. No. 26965/74 FEBRUARY 10th 1986
MANAV MANDIR NWHSP—7

ADDRESS

To

3809 Sh. Srisatya Narayan
H. No. 1-8-213/1 Peudergost
Road Secunderabad A.P.

Phone : 2022

From

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb